रत्न चिकित्सा

डा॰ वि॰ भट्टाचार्य्य

रत्न चिकित्सा

डा० विनयतोष भट्टाचार्य्य, एम० ए०, पी-एच्० डी०
राज्यरत्न, ज्ञानज्योति,
भूतपूर्व व्यवस्थापक, प्राच्यविद्यामंदिर,
वड़ोदा

के० एल० मुखोपाध्याय प्रकाशन
कलकत्ता ।

प्रकाशक
के० एल० मुखोपाध्याय प्रकाशन
६/१ ए, वांछाराम अक्रूर लेन
कलकत्ता—१२

वाराणसी कार्यालय
१०७, भेलूपुर
वाराणसी—१

मुद्रक
अमल कुमार बसु,
इंडियन प्रेस (प्राइवेट) लि०
वाराणसी शाखा

मूल्य

सूचीपत्र

भूमिका

यह छोटी सी पुस्तक इस वर्ष के प्रारम्भ में प्रकाशित रत्नचिकित्सा के ऊपर मेरी अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद है। कलेदा कृष्णगोपाल, अजमेर से प्रकाशित प्रसिद्ध स्वास्थ्य संबन्धी मासिक पत्र 'स्वास्थ्य' में इस अंग्रेजी पुस्तक की समालोचना करते हुए समालोचक महाशयने अपना विचार प्रगट किया है कि इस पुस्तक में प्रकाशित विद्या हमारे वैद्य बन्धुओं के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध होगी लेकिन अंग्रेजी में लिखित होने के कारण वह इससे लाभ नहीं उठा सकेंगे। आगे चलकर समालोचक महाशयने कहा है कि अच्छा हो यदि इस पुस्तक का एक हिन्दी भाषा में, जिससे बहुत लोग परिचित हैं, अनुवाद हो जाय।

मेरे कई मित्रों और शुभचिन्तकों की भी यही राय थी और उन्होंने इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने की इच्छा प्रगट की। इन सज्जनों में दिल्ली और वाराणसी के मोतीलाल बनारसीदास नामक प्रसिद्ध पुस्तक प्रकाशन संस्था के मालिक सेठ सुन्दरलाल जैन और प्रसिद्ध मासिक पत्र 'रसायण' के सम्पादक दिल्ली वासी वैद्यराज श्री गनपति सिंह वर्मा भी शामिल हैं।

कुछ समय के बाद मेरी अंग्रेजी पुस्तक के प्रकाशक मेसर्स फर्मा के. एल. मुखोपाध्याय के मालिक कलकत्तावासी श्री के. एल. मुखोपाध्याय ने इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाश करने का विचार किया। उन्हीं की इच्छानुसार यह हिन्दी अनुवाद उनके द्वारा प्रकाशित हो रहा है।

अंग्रेजी पुस्तक का हिन्दी में अनुवाद करनेवाला हिन्दी पण्डित यहाँ मिलना बहुत कठिन है। मेरा पुत्र श्री अमियकुमार भट्टाचार्य्य डि. एम. एस., जो

यहाँ डाक्टरी करता है, इस काम को करने के लिये सम्मत हो गया। उसका किया हुआ यह अनुवाद जन साधारण के सामने, हमारे वैद्य बन्धुओं के सामने और हमारे प्राचीन कला और विज्ञान के प्रेमियों के सामने पेश किया जाता है।

इस पुस्तक के प्रकाशन के लिये मैं श्री के. एल. मुखोपाध्याय का बहुत आभारी हूँ। अंग्रेजी पुस्तक को हिन्दी में अनुवाद करने के लिये मैं डा० ए. के. भट्टाचार्य्य को हृदय से धन्यवाद देता हूँ और अन्त में जिन मित्रों, शुभचिन्तकों और समालोचकों ने यह हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करने की सलाह दी और इस काम में मुझे उत्साहित किया उनका भी मैं बड़ा कृतज्ञ हूँ।

शान्ति भिला,
नैहाटी (प. बंगाल) — वि. भट्टाचार्य्य
६ दिसम्बर १९५८

अध्याय १

रत्नों की प्रकृति और शक्ति।

यह तो सभी जानते हैं कि रत्न कीमती पत्थर हैं और धनी लोग बड़ी तत्परता के साथ इनकी खोज में रहते हैं। उनका विचार है कि रत्न तो घनीभूत धन हैं और रत्नों का व्यवहार भी वह ऐसे धन के रूप में ही करते हैं। दूसरी ओर विज्ञ लोगों का कथन है कि दुनिया में तो तीन ही रत्न हैं—जल, खाद्य और सदुपदेश। जो लोग पत्थर के टुकड़ों को रत्न बताते हैं वह तो केवल मूर्ख ही हैं।

वस्तुतः रत्न भिन्न भिन्न गुणों और रंगों के पत्थर के टुकड़े ही हैं। कई तो बहुत कीमती हैं और कई सस्ते। कुछ चमकदार हैं और कुछ ज्योतिहीन। कुछ का रंग चटकीला और आकर्षक है तो कइयों में रंग की बहार तनिक भी नहीं है। कुछ उपकारी हैं कुछ हानिकारक। कुछ चित्ताकर्षक हैं, कुछ अप्रीतिकर। कुछ एक रंग के हैं और कुछ में कई तरह के रंगों का मेल है।

कुछ प्रसिद्ध और लोकप्रिय रत्नों के नाम नीचे दिये जाते हैं। स्फटिक, वैदूर्य (लहसुनिया), वैक्रान्तमणि (सुर्ख तामड़ा—Garnet), एमेथिस्ट (जामुनिया), प्रवाल (मूँगा), श्वेत-पुखराज, पन्ना या मरकतमणि, गन्धर्व-मणि (हकीक), मोती, चुन्नी, गोमेद या सुलेमानी पत्थर, नीलम, सिकन्दरी पत्थर, उपलमणि, सोनैज़ा, फिरोजा, हीरा, रोचक। इनके अतिरिक्त और भी कई प्रकार के कीमती पत्थर पाये जाते हैं।

अनादिकाल से मनुष्य रत्नों को अपने काम में लाते आये हैं। बहुधा रत्नों का व्यवहार धन की वृद्धि करने, दीर्घायु पाने, शक्ति और लोकप्रियता बढ़ाने,

और रोग और विपत्ति से बचने के लिये होता है। प्राचीन भारत में नृपति-वर्ग आकस्मिक दैव विपत्ति से बचने के लिये अच्छे से अच्छे रत्नों को धारण करते थे। फलित ज्योतिष में कुग्रहों के प्रभाव को दूर करने के लिये भिन्न-भिन्न रत्नों के धारण की विधि दी गई है। वराहमिहिर के समय (आनुमानिक ४०० ईसवीं) से ही ज्योतिष के प्राचीन ग्रन्थों में रत्नों का और उनके प्रभाव का उल्लेख है। सबसे प्राचीन पुराण (विष्णु पुराण, आनुमानिक ख़ृ. पू. दूसरी शताब्दी) में रत्नों की उत्पत्ति और उनकी शक्ति का बहुत व्यापक वर्णन है। आजकल भी लालची लोग धन की वृद्धि के लिये, और रोगपीड़ित मनुष्य कष्ट से छुटकारा पाने के लिये, रत्नों को धारण करते हैं।

रत्न विषयक एक दृष्टिकोण और भी है जिसे कम महत्वपूर्ण समझना ठीक न होगा। कई रत्न तो औषधि की तरह उपयोग में लाये जा सकते हैं, और भारत के वैद्यकशास्त्र के ग्रन्थों में औषधि के रूप में रत्नों के व्यवहार की विधि दी गई है। रत्नों के भस्म बनाने की बहुत पेचीली प्रक्रियायें हैं। इन रत्न भस्मों का साधारण और कठिन रोगों में उपयोग होता है।

मिस्र के फराँव टुटनखामेन के कब्र से जो रत्न निकाले गये उन्होंने तो कब्र के आविष्कारक और खोदनेवालों पर बड़ा ही बुरा प्रभाव डाला। यह कथा तो प्रायः सब ही को मालूम है। और कई लोगों को इस विषय में सन्देह है कि लार्ड कारनारवन और उनके साथियों पर जो विपत्तियाँ आन पड़ीं उनका कारण इन रत्नों का निकालना था अथवा कब्र पर खुदे हुए अभिशाप का ही फल।

लेकिन रत्नों की शक्ति का स्वास्थ्य के ऊपर महत्वपूर्ण प्रभाव के उदाहरण भी बहुत पाये जाते हैं। कई वर्ष की बात है मेरे ही नजर में ऐसा एक दृष्टान्त आया था। एक मामूली चुन्नी में भी कितनी हानिकारक शक्ति रह सकती है यह दिखलाने के लिये ही मैं इस रोगी का पूरा वर्णन लिखना आवश्यक समझता हूँ।

श्री जोशी बम्बई के एक जौहरी थे। कारबार की उन्नति के लिये उनके मित्रों ने उनको एक चुन्नी धारण करने की सलाह दी! यह मित्र ज्योतिष शास्त्र के नियमों से अपरिचित थे और रत्नों की शक्ति का उन्हें कुछ भी ज्ञान न था, अतः परिणाम का विचार किये बिना ही उन्होंने ऐसी बेतुकी सलाह दे डाली।

जोशीजी ने खूब भारी, गाढ़े लाल रंग की चमकदार और शक्तिशाली एक चुन्नी लेकर अंगूठी में जड़वा दी और उसे पहनना शुरू कर दिया। चुन्नी में बिलकुल कोई दोष न था। तीन महीने तक तो कुछ नहीं हुआ। लेकिन इसके बाद एक दिन उन्हें बड़े जोर का बुखार चढ़ आया (१०६°)। यथा नियम डाक्टर बुलाये गये। ज्वर के ताप को घटाने के लिये तेज गोलियाँ दी गईं। लेकिन थोड़े ही समय के बाद बहुत पसीने के साथ वह हिमांग होकर बेहोश हो गये और उनके नाड़ी की गति बन्द हो गई। उत्तेजक दवाइयों के प्रयोग से उनका ज्ञान तो लौट आया लेकिन उनके नीचे के अंग में लकवा मार गया, और उस अंग में हिलने की शक्ति न रही तथा वह निष्क्रिय हो गया।

फिर तो उत्तेजक और बलकारक औषधियों का प्रयोग, किरण, बिजली का धक्का—इनका सिलसिला बराबर चलता रहा लेकिन रोगी को कोई लाभ नहीं हुआ। उनका कारबार बिक गया और सभी ने सोचा कि उनके जीवन के शेष दिन आ पहुँचे हैं। दो वर्ष तक लगातार उनके शरीर का ताप पूर्ववत् ही रहा और वह निम्नांगों के पक्षाघात से पीड़ित पड़े रहे और अन्ततः दुर्बल और क्षीण हो गये।

अब जोशीजी ने होमियोपेथी चिकित्सा कराने का विचार किया। दबे हुए ज्वर को फिर लौटा लाने के लिये उनको कुछ तेज औषधियाँ दी गईं। उनका ताप १०४° तक पहुँच गया। जब ताप सर्वोच्च मात्रा पर पहुँच गया तब धीरे-धीरे उनका एक एक अंग (जिसे लकवा मार गया था) हलका होता गया और उनमें गति आ गई। हफ्ते भर में वह बैठ सके और

धीरे-धीरे घर में थोड़ा बहुत चलना फिरना भी उन्होंने आरम्भ कर दिया। लेकिन उनका ताप पूर्ववत् बना ही रहा।

ज्वर प्रतिरोधक औषधियाँ बहुत दी गईं लेकिन ज्वर नहीं गया। फिर एक बार उनकी अच्छी तरह परीक्षा करनी पड़ी। तब हम लोगों ने देखा कि उनकी उँगली में एक शक्तिशाली चुन्नी को अंगूठी है। जोशीजी की जन्मपत्रिका मंगाई गई। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार चुन्नी तबही धारण की जाती है जब जन्मपत्रिका में रवि का स्थान नीचा हो। लेकिन इनकी जन्मपत्रिका में देखा गया कि रवि तो एकादश कक्षा में सिंह राशि में बड़ा प्रबल है और तुला राशि लग्न पर है। जब सूर्य दुर्बल होता है तब विश्वज्योति के लाल रंग का शोषण नहीं होता है। चुन्नी तो वायुमंडल से सूर्य के ताप को ग्रहण करने के लिये धारण की जाती है। इस जन्मपत्रिका में सूर्य तो अपनी कक्षा सिंह राशि में है, इसलिये प्रबल है। और एकादश स्थान में होने के कारण और भी पराक्रमशाली है। बात तो यह है कि जोशीजी को चुन्नी किसी हालत में भी धारण करना उचित न था।

रोगी को कहा गया कि वह अंगूठी को खोल दें और जिस मकान में वह रहते थे उसके बाहर अंगूठी को भेज दें। उनकी विपत्तियों का कारण चुन्नी ही है या नहीं यह देखने के लिये उनको कोई दवा नहीं दी गई। आश्चर्य की बात है कि २४ घण्टे में ही दो वर्ष का पुराना बुखार बिलकुल उतर गया। उनके शरीर में ताप देने के लिये चुन्नी की आवश्यकता तो थी ही नहीं, इसलिये ज्वर ठहर नहीं सका। १० वर्ष तक उनको फिर ज्वर नहीं हुआ और उनका शरीर ऐसा मोटा ताजा हो गया कि जिन्होंने उनको ज्वरावस्था में देखा था वह उनको मुशकिल से ही पहचान सकते थे।

इस दृष्टान्त को देखकर मन में यह बात बिलकुल जँच गई कि रत्नों में उपकार और अपकार करने की बड़ी भारी शक्ति रहती है, और इसीलिये रत्नों

का व्यवहार बहुत सावधानी और सूक्ष्म विचार के साथ करना चाहिये। इनकी शक्ति का प्रयोग भी मनुष्य के उपकार के लिये करना चाहिये। यह बड़े सन्तोष की बात है कि इस 'रत्न चिकित्सा' की सहायता से विश्वशक्ति का एक बड़ा भाग मनुष्य के दुःख कष्ट की शान्ति के लिये काम में लाया जा सकेगा। ईश्वर करे रत्न चिकित्सा चिरस्थायी हो।

रत्न चिकित्सा पृथिवी में चालू अन्य चिकित्साओं में गिनी जायगी और जगत् की चिकित्सा प्रणालियों में अपना यथोचित स्थान अधिकार करेगी।

अध्याय २

रत्न विश्वज्योति की खान हैं।

जिन सात विश्वज्योतियों से ब्रह्माण्ड की रचना हुई है उनकी अक्षय निधि सात मुख्य रत्न हैं। यह सात ज्योति इन्द्रधनुष में एक नियम के अनुसार सजी हुई दिखाई देती हैं और इसी से सब सांसारिक मानवों को यह सूचना मिलती है कि यही सात ज्योतियाँ जगत् संसार की मूल कारण हैं और इनके अतिरिक्त और कहीं सृष्टि के कारण की खोज करना सम्भव नहीं है। यह विश्व-ज्योतियाँ ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्त्ता जगदीश्वर के दिव्य देह से निकलती हैं और उन्हीं देवादिदेव की भाँति यह भी सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमती, सर्वत्र वर्तमान और आदि अन्तहीन हैं।

सब वास्तव स्पर्शनीय पदार्थ ही अन्तिम दशा में इन सात ज्योतियों के घनीभूत रूप ही हैं। इन ज्योतियों से जगत् के आदिम सृष्टिकर्त्ता जगत् और सर्व चराचर विश्व का सृजन, पालन और संहार करते हैं। हिन्दुओं के कूर्म्म पुराण का तो कथन है कि सात ग्रह भी इन सात ज्योतियों ही की घनीभूत अवस्थायें हैं, और इन ग्रहों का पोषण भी इन ज्योतियों से ही होता है।

ग्रहों की तरह उनके पवित्र रत्न भी सात ज्योतियों के घनीकृत रूप हैं। इनको मनुष्य के कल्याण और रोगमुक्ति के लिये व्यवहार करने के कई कारण हैं। पहले तो रत्नों में शुद्ध रंग और एकही मात्र रंग प्रचुरता में उपलब्ध हैं और इनमें मिश्र रंग नहीं मिलता जैसा कि अन्य वस्तुओं में सर्वत्र पाया जाता है। दूसरे—इन रत्नों में बहुत ही तेज चमक रहती है जिससे इनके भीतर की परिपूर्ण ज्योति प्रकाशित होती है। तीसरे—यह रत्न एलकोहल, शोधित स्पिरिट या जल में बड़ी आसानी से अपनी ज्योति का विक्षेप कर देते हैं लेकिन इस विक्षेपण के द्वारा

इनकी ज्योति का ह्रास नहीं होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि रत्न विश्वज्योति का अक्षय और चिरस्थायी भंडार हैं और इनको बदलने की आवश्यकता कदाचित् ही पड़ती है।

हर एक रत्न का एक निजी रंग है जो उसके भीतर की वास्तविक विश्वज्योति के रंग से भिन्न दीखता है। इसलिये इन रत्नों की पुनः पुनः बहुत सावधानी के साथ त्रिकोण काँच से परीक्षा करनी चाहिये ताकि इनके असली विश्व-रंग का पता लग जाय। श्वेत-पुखराज (Moonstone) यों तो काँच की तरह सफ़ेद मालूम देता है लेकिन त्रिकोण काँच से उसका रंग आसमानी (Blue) दिखाई पड़ता है। अतः श्वेत-पुखराज आसमानी विश्व-रंग का भंडार है।

इसी तरह हीरा साधारणतः देखने में काँच की तरह मालूम होता है लेकिन त्रिकोण काँच द्वारा देखने से श्वेत-पुखराज से कुछ अधिक गहरा आसमानी दिखाई देता है। अतः हीरा नीली विश्वज्योति का भंडार है। वैसे ही मोती दूध की तरह सफ़ेद दीखता है लेकिन त्रिकोण काँच से देखा जाय तो इसका रंग नारंगी है। अतः मोती नारंगी रंग के विश्वकिरण का आधार है।

भिन्न भिन्न रत्न भिन्न रंग के विश्वकिरणों को विकीर्ण करते हैं, इसलिये इनकी प्रकृति और गुणों का संक्षिप्त वर्णन देना आवश्यक है। यदि इनके गुणों का यथावत् ज्ञान न हो तो मनुष्य के कष्टदायक रोगों में इनका ठीक ठीक उपयोग नहीं हो सकता है।

यथा यह जानना आवश्यक है कि चुन्नी लाल विश्वज्योति और प्रवाल पीली विश्वज्योति को छोड़ता है, पन्ने में हरे रंग की विश्वज्योति रहती है, श्वेत-पुखराज आसमानी रंग की विश्वज्योति का आकर है, हीरे की विश्वज्योति नीले रंग की और नीलम की बैंगनी होती है।

अब रत्नों और उनकी विश्वज्योति की प्रकृति और गुणों का वर्णन क्रमशः दिया जाता है।

१—चुन्नी (लाल विश्वज्योति)

चुन्नी का स्वभाव गरम है इसलिये इस रत्न से लाल विश्वज्योति के रूप में गरम लहरों का विकिरण होता है जिनसे उन रोगों में उपकार होता है जो सर्दी से उत्पन्न होते हैं और जिनमें ठंडा और पतला स्राव निकलता है। प्रकृति में लाल किरणों का तरी पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और इनके प्रभाव से पेड़ के पत्ते सूख जाते हैं और यह सूखे पत्ते और लकड़ियों को जलने की शक्ति देती हैं। लाल विश्वरंग सूर्य से सम्बन्ध रखता है। सूर्य मनुष्य शरीर में आत्मा का आदर्श है और अस्थिमंडल का, जो समूचे शरीर को खड़ा रखता है—प्रभु है। त्रिकोण काँच से चुन्नी गाढ़े लाल रंग की मालूम पड़ती है अतः चुन्नी घनीभूत रक्तकिरण है।

"वर्ण चिकित्सा की सात कुंजियाँ" के ग्रन्थकार श्री रोलेंड हण्ट का कथन है कि लाल किरणें नीचे लिखे हुए रोगों में बहुत उपकारी हैं यथा—रक्तधारा की बीमारियाँ, रक्ताल्पता, कमजोरी और अवसाद, सर्दी, रक्तप्रवाह की कमी अर्थात् असम्पूर्णता, लकवा, बुद्धिहीनता इत्यादि। मरणासन्न अवस्था में जब नाड़ी की गति बन्द हो गई हो, बहुत पसीना निकलता हो और शरीर ठंडा हो गया हो तब लाल किरणें उपयोगी सिद्ध होती हैं। बुद्धिहीन और जड़मति मनुष्यों पर इनका अच्छा प्रभाव देखा गया है।

२—मोती (नारंगी रंग की विश्वज्योति)

मोती की प्रकृति ठंडी है और इससे नारंगी रंग की लहरें निकलती हैं जो गर्मी और गर्म किरणों से उत्पन्न रोगों को आराम करती हैं। मोती की किरणें जलतत्व के अधिकार में हैं और शरीर और रक्तप्रवाह के पतले स्रावों से इनका

सम्बन्ध है। जब गर्मी को रोकना हो तो मोती की किरणें निर्भरता के साथ दी जा सकती हैं। यदि रक्त में, मांस के तन्तुओं में, चर्बी और हड्डियों में, तरी की आवश्यकता हो तो मोती की किरणों का व्यवहार किया जा सकता है। मोती का नारंगी रंग इसका सम्बन्ध सुखदायक उपग्रह चन्द्र के साथ करता है। चन्द्रमा मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर का आदर्श है जैसे कि सूर्य आत्मा का। इसके अतिरिक्त हृदय और रक्तप्रवाह पर भी चन्द्रमा का अधिकार है। चन्द्रमा का मन के ऊपर बहुत प्रभाव है। पागलपन का उद्भव अशुभदायक चन्द्र या चन्द्र की वक्र दृष्टि से होता है। त्रिकोण काँच से मोती नारंगी रंग की दीखती है, इसलिये मोती नारंगी विश्वज्योति का भंडार है।

रोलेंड हण्ट अपनी पुस्तक "वर्ण चिकित्सा की सात कुंजियाँ" में कहते हैं कि नारंगी रंग नीचे लिखे हुए रोगों में उपयोगी है—"पुराना श्वासरोग, कफयुक्त बीमारियाँ, वायु नलियों का प्रदाह, बलगम के साथ खांसी, गठिया, पुराना वातरोग, मूत्रग्रन्थि का प्रदाह, पित्तपथरी, किसी अंग का भ्रंश, स्त्रियों का ऋतु बन्द होना, दिमाग की कमजोरी, हैजा इत्यादि। बच्चों के उन्माद रोग में, ज्वर में, रक्तस्राव में, और इसी प्रकार के रोगों में नारंगी रंग की किरणों से अच्छा फल मिलता है।

३—प्रवाल (पीली विश्वज्योति)

पीले रंग के प्रवाल से गरम किरणें निकलती हैं और वह मनुष्य शरीरके गाढ़े लसिका रस (Lymph) को शुष्क कर देती हैं। वात रोग में यह गाढ़ा लसिका रस मांस में संचित होता है और इससे प्रदाह और दर्द पैदा होता है। यह दर्द प्रवाल की गरम किरणों से घट जाता है। प्रवाल और उसकी गरम किरणों का रणप्रिय ग्रह मंगल से संबन्ध है। मंगल ग्रह का मज्जाओं पर अधिकार है—अतः पीला रंग शरीरके मज्जा को पुष्ट करता है। दुर्बल मज्जा बहुत ही अस्थिर होती है। मस्तिष्क और जननेन्द्रिय भी मंगल के द्वारा प्रभावित

हैं, इसलिये यह पीली विश्वज्योति के अधिकार के अन्तर्गत हैं। यों तो प्रवाल साधारणतया लाल दीखता है लेकिन त्रिकोण कांच में इसका रंग पीला है। इसलिये प्रवाल पीले किरणों का आकर है।

"वर्ण चिकित्सा की सात कुंजियाँ" के ग्रन्थकार श्री रोलेंड हण्ट के मतानुसार नीचे लिखे रोगों में पीले किरणों की आवश्यकता होती है। पेट की गड़बड़, अजीर्ण और उससे सम्बन्धित रोग, कोष्ठबद्धता, कोष्ठवायु, यकृत की बीमारियाँ, मधुमेह, अन्धी-बवासीर, खुजली, चर्मकी बीमारियाँ, कुष्ठ और स्नायविक अवसाद। पीली किरणों से बहुत कठिन मानसिक अवसन्नता भी जाती रहती है।

४—पन्ना (हरी विश्वज्योति)

पन्ना हरे रंग की ठंडी किरणें छोड़ता है। पृथ्वीतत्व का रंग हरा होता है और इस की प्रकृति ठंडी होती है। अतः हरे रंग की शक्ति धनात्मक है और यह एकीकरण शक्ति-सम्पन्न है। मनुष्य शरीर में पृथ्वीतत्व का नमूना भारी अंतड़ियों में, हड्डियों में, चर्म, यकृत और तिल्ली में और पेट की नाड़ियों में मिलता है। शरीर के यह भारी तत्व पन्ने से निकले हुए हरे रंग के अधिकार में आते हैं, और उनकी पुष्टि और स्वास्थ्य विश्वहरित के ऊपर बहुत कुछ निर्भर करता है। प्रकृति में जब हरे रंग की स्वल्पता होती है तब उस हरे रंग की कमी को पन्ने का रंग पूर्ण करता है। पन्ना और उसके रंग का सम्बन्ध चञ्चल प्रकृति के ग्रह बुध से है। त्रिकोण काँच में पन्ना हरे रंग का मालूम होता है, इसलिये पन्ना हरे रंग की विश्वज्योति का घनीभूत रूप है।

"वर्ण चिकित्सा की सात कुञ्जियाँ" के ग्रन्थकार श्री रोलेंड हण्ट के अनुसार हरा रंग निम्नलिखित रोगों में काम आता है। हृदय की बीमारियाँ, रक्त का दबाव, घाव, कर्कट रोग (cancer), सिरदर्द, स्नायुशूल, वातश्लेष्मिक-ज्वर (influenza), उपदंश, विसर्प इत्यादि। हरी किरणों से श्वासरोग, जला

चमड़ा, चोट, घाव और चर्मरोग की चिकित्सा में भी सहायता मिलती है। हरे रंग में शरीर को स्थूल करने का गुण प्रत्यक्ष है।

५—श्वेत-पुखराज (आसमानी विश्वज्योति)

श्वेत-पुखराज स्फटिक और सुनैला (Topaz) एक ही रंग की श्रेणी में हैं। त्रिकोण कांच से इन सबका ही रंग आसमानी मालूम होता है। अतः यह रत्न-वर्ग आसमानी किरण का घनीभूत समाहार है। आसमानी रंग आकाश तत्व से संबन्ध रखता है जिससे सब स्थावर और अस्थावर सृष्टि को जीवनी शक्ति मिलती है। अतः श्वेत-पुखराज और स्फटिक जीवनदाता हैं। श्वेत-पुखराज और इसके आसमानी रंग का संबन्ध शुभ ग्रह बृहस्पति से है। यह ग्रह मनुष्य और सब सांस लेने वाले जीवों के जीवनतत्व का अधिपति है। बृहस्पति शरीर के मेदचक्र में रहता है और इसका अधिकार शरीर की ग्रन्थियों पर है। शरीर के समस्त शून्य स्थान बृहस्पति और उसके आसमानी रंग से प्रभावित होते हैं। शरीर के शून्य स्थानों से शब्द निकलता है जो कि आकाश का गुण है और इसी आकाश में जीवनी शक्ति रहती है। विश्वज्योति की आसमानी किरणें शरीर के मेदचक्र और ग्रन्थियों को पुष्ट करती हैं।

श्री रोलेंड हण्ट ने "वर्ण चिकित्सा की सात कुंजियाँ" में लिखा है कि नीचे लिखे हुए रोगों में आसमानी रंग की आवश्यकता पड़ती है। तमाम गले की बीमारियाँ, स्वरनाली-प्रदाह (Laryngitis), गलगंड (Goitre), गलक्षत (Sore Throat), स्वरभंग, शोणत्वग-ज्वर (Scarlet fever), आन्त्र ज्वर, हैजा, गाँठ युक्त प्लेग, मसूरिका या चेचक, जल-चेचक (Chicken Pox), खसरा (measles), मुखक्षत, सन्यास रोग, गुल्म वायु (Hysteria), अपस्मार या मृगी, दिल धड़कना, आक्षेप, तीव्र संधि-वात, उलटी, विरेचन,

प्यास, रक्तातिसार, उदरामय, कामला, पित्तप्रकोप, उदरशूल, आँतों की सूजन, चक्षुप्रदाह, डंक, खुजली, दंतशूल, सिर दर्द, स्नायविक व्याधियाँ, अनिद्रा, कष्टदायक ऋतु, विक्षोभ इत्यादि। तालुमूल-प्रदाह और कुक्कुर खाँसी भी आसमानी किरणों से आराम होते हैं।

६—हीरा (नीली विश्वज्योति)

त्रिकोण काँच से देखने पर हीरा नीले रंग का मालूम होता है। अतः हीरा नीले रंग का घनीभूत रूप है। मनुष्य शरीर में नीले रंग का नमूना सब मोटे लसिका रसों में यथा गाढ़ा बलगम, गाढ़ा रस, पीव और अन्यान्य चिपकने वाले रसों और शुक्र में मिलता है। नीला रंग शुभदायक ग्रह शुक्र के अधिकार में है। नीला रंग और हीरा दोनों जलतत्व के अधीन हैं और दोनों की प्रकृति ठंडी और धनात्मक (Positive) है। भारतीय वैद्यक शास्त्र का कथन है कि हीरे में छहों रसों का समावेश है यथा—मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय। इस गुण के कारण जो कठिन रोग त्रिदोष (वात, पित्त और कफ) के समकालीन विकार से उत्पन्न होते हैं उनके लिये हीरा अच्छी औषधि माना जाता है।

श्री रोलैंड हण्ट "वर्ण चिकित्सा की सात कुंजियाँ" के ग्रन्थकार के मतानुसार नीली किरणें नीचे लिखी हुई बीमारियों में लाभदायक हैं। आँख की बीमारियाँ, कान और नाक की शिकायतें, मुख का पक्षाघात, फेफड़ों की बीमारियाँ, फुसफुस का प्रदाह, वायु नलियों का प्रदाह, स्वरघ्न, कुक्कुर खाँसी, दमा, क्षयरोग, अग्निमांद्य, रेंगता हुआ पक्षाघात, बच्चों का आक्षेप, सन्यस्त-प्रलाप (Delirium Tremens), आवेश, और अन्य प्रकार के उन्माद रोग। नीली किरणों ने धवल रोग, उपान्त्र प्रदाह और क्लेदयुक्त तालुमूल को आराम किया है।

७—नीलम (बेंगनी विश्वज्योति)

त्रिकोण काँच में नीलम का रंग बेंगनी दीखता है। अतः नीलम बेंगनी रंग का घनीभूत आकर है। नीलम का पराक्रमशाली ग्रह शनि से संबन्ध है

जो कि विपत्ति कारक है और अहंकार चूर्ण करनेवाला है। बेंगनी वायु-तत्व का रंग है और तेज आँधी में चारों ओर के वायुमंडल का दृश्य बेंगनी रंग का हो जाता है। शनि समग्र स्नायुमंडल का अधिपति है और उसका बेंगनी रंग स्नायु क्षुधा को मिटाता है। मनुष्य की त्वचा का रंग बेंगनी है। इसलिये नीलम अपने बेंगनी रंग से त्वचा को पुष्ट करता है और चर्म रोगों को आराम करता है। बहुत पुराने धवल के रोगी नीलम और उसके बेंगनी रंग से आरोग्य हुए हैं।

श्री रोलेंड हण्ट के मतानुसार बेंगनी रंग से निम्नलिखित रोगों में उपकार होता है। स्नायविक और मानसिक विकार, स्नायुरोग, स्नायुशूल, कटिशूल, खोपड़ी की बीमारियाँ, मृगी, मस्तिष्क की झिल्ली का प्रदाह, विकम्पन, अंगाक्षेप संधिवात, रसौली, वृक्कक और मूत्राशय की बीमारियाँ। ग्रन्थकार और भी कहते हैं कि बेंगनी रंग शिराओं में प्रवाहित रक्त को सजीव और शुद्ध करता है। बेंगनी किरणों ने बहुत सुगमता और सफलता के साथ सब तरह के तीव्र स्नायविक दर्द, शरीर के किसी भाग का दर्द, गठिया का दर्द, मांस और चर्म का घाव और कई तरह के पुराने चर्म रोग और धवल रोगों को आराम किया है।

अध्याय ३

रत्न और इन्द्रधनुष।

स्वामी शिवानन्दजी ने सच ही कहा है कि ईश्वर एक ही है जो कि सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापी है। उसकी अनिर्वचनीय रचना—ब्रह्माण्ड के समान अन्तहीन—किरणों और प्रसरणों (Radiations) से बनी हुई है। इन किरणों के गुण और शक्ति भी भागवती या ईश्वरीय ही हैं। जिस आदि विश्वबीज को हम भगवान्, ब्रह्म अथवा शून्य कहते हैं, वह सर्वत्र किरण और दीप्ति के रूप में विराजमान हैं। इसका प्रमाण अनुसन्धान करनेवाले को एक साधारण त्रिकोण काँच से मिल जायगा। पृथ्वी में कोई प्रत्यक्ष वस्तु ऐसी नहीं है जो किरणों से बनी हुई न हो, अथवा जिसमें रङ्ग न हो। सच बात तो यह है कि ये सातों रंग सृष्टिकर्ता के सहकारी हैं और यह ही अपने सर्वज्ञता, सर्वशक्तिमत्ता और सर्वव्यापिता के प्रभाव से जगत् की सृष्टि, पालन और नाश करते हैं। यही विश्वज्योति हैं।

रत्न प्रत्यक्ष वस्तु हैं। यह किरण और दीप्ति के घनीभूत रूप के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। जिन सात प्रधान रंगों से ज्योतिष्मान भगवान का अंग बना हुआ है (जैसा कि इन्द्रधनुष में देखा जाता है), यही सात रंग पृथक्तया सात प्रधान रत्नों में घनीभूत हैं। अतः ये रत्न विश्वज्योतियों के अक्षय आधार हैं। जब तक ये सम्पूर्ण नष्ट या भस्म नहीं हो जाते हैं तब तक विश्व किरणों का प्रसारण बंद नहीं करते हैं, चाहे उनको किसी भी स्थान में रखा जाय या तावीज और अंगूठी में जड़ा जाय या किसी स्थित्यात्मक या गत्यात्मक रूप में औषधि की तरह व्यवहार किया जाय।

अतः रत्न विश्वज्योतियों के अक्षय भंडार हैं। इन्द्रधनुष में सात रंग होते

हैं। आधुनिक विज्ञान में इन सात रंगों का नाम है 'बेंनीआहपिनाला' (VIBGYOR)। यह शब्द, बेंगनी (Violet), नीला (Indigo), आसमानी (Blue), हरा (Green), पीला (Yellow), नारंगी (Orange) और लाल (Red), इन सात रंगों के आद्य अक्षरों को लेके बना हुआ है। यह सब विश्व रंग रत्नों में घनीभूत हैं। इन संचित विश्वकिरणों का दवा की तरह उपयोग किया जा सकता है और उससे मनुष्य-समाज को बहुत उपकार पहुँच सकता है।

नीलम में बेगनी रंग संचित है, हीरे में नीला रंग, श्वेत-पुखराज में आसमानी, पन्ना में हरा, प्रवाल में पीला, मोती में नारंगी और चुन्नी में लाल विश्व किरण। यह रंगीन किरणें भिन्न भिन्न रोगों की औषधियों में किस प्रकार रूपान्तरित की जा सकती हैं, इसी का वर्णन इस छोटी सी पुस्तक में दिया जायगा।

मनुष्य जाति के नाते हम सातविश्व-किरणों के पूर्णतया अधीन हैं। इनके बिना न तो हमारे शरीर का अस्तित्व है, न हमारी इन्द्रियों का, न कार्यशक्ति का और न हमारे शरीर के तन्तु और कोषों का। हमारे शरीर का प्रत्येक कोष अन्य वस्तुओं की तरह इन्द्रधनुष के सात रंगों से बना हुआ है। अगर इनके गठन में और कोई रंग आ गये हों तो उन्हें न तो हम देख सकते हैं और न ही अन्य किसी को दिखा सकते हैं।

सब प्रत्यक्ष वस्तु सात विश्व रंगों से बनी हुई हैं, और जिज्ञासा की भावना से यदि कोई त्रिकोण काँच द्वारा इस विषय की परीक्षा करे तो उसे इस बात का प्रमाण आसानी से मिल जायगा। एक दृष्टांत लीजिये; एक संवादपत्र में करोड़ों छपे हुए अक्षर होते हैं, यदि त्रिकोण कांच से एक एक अक्षर की जाँच की जाय तो उसमें सात विश्वरंग पाये जायेंगे। यदि त्रिकोण कांच से सादी या औषधियुक्त गोलियों की परीक्षा की जाय तो देखा जायगा कि प्रत्येक गोली के

गठन में सात विश्वरंग वर्तमान हैं। अतः इस पृथ्वी में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो सात विश्वकिरणों से बनी हुई न हो।

मनुष्य शरीर कोष और कोषों के समूह से बना हुआ है। प्रत्येक कोष भी सात विश्वरंगों से निर्मित है। इन विश्वरंगों की साम्यावस्था कोषों को नीरोग रखती है और इसीके कारण हमारा शरीर भी स्वस्थ रहता है। लेकिन कोषों और कोष समूह के सात रंगों को साम्यावस्था में रखना बहुत कठिन है। आन्तः और वाह्य अवस्था और प्रयोजन के अनुसार ये रंग सर्वदा परिवर्तित होते रहते हैं। इस तरह भीतर और बाहर की शक्तियों की पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रियाओं द्वारा कोषस्थित रंगों की साम्यता विकल हो जाती है और इन रंगों की शृङ्खला टूट जाती है। इसके लिये हमारी बुरी आदतें भी बहुत कुछ उत्तरदायी हैं।

परन्तु हमारा शरीर इस ढंग से रचा हुआ है कि यदि एकही रंग विकल हो जाय तो कोई रोग नहीं आ सकता है। अगर दो भी रंग विकल हो जायें तब भी कोई रोग दिखाई नहीं देता। परन्तु यदि तीन या चार किरण विकल हो जायें और इसी विकल अवस्था में अधिक समय तक रहें तो रोग शरीरपर आक्रमण कर देते हैं और कभी कभी उसका परिणाम बहुत ही बुरा होता है। परन्तु जब छः रंगों में विकलता उत्पन्न हो जाती है तब बहुत कठिन और असाध्य रोगों का आक्रमण शरीर पर हो जाता है और वह प्रायशः प्राणघाती होते हैं। क्षय-रोग, मधुमेह, लकवा, सुषुम्नाप्रदाह, पोलिओ, लिउकेमिया, प्रभृति इस पर्याय के रोग हैं। चाहे कितनी भी गवेषणा की जाय इन रोगों की कोई अचूक दवा नहीं मिल सकती क्योंकि जिन विश्वकिरणों से हमारा शरीर बना हुआ है उनकी साम्यता नष्ट हो गई है, इसीलिये शरीर विश्लिष्ट हो जाता है और मृत्यु को प्राप्त होता है। लेकिन रंगों के स्पंदन और रंग की औषधियों से रुग्न कोष और तन्तुओं की धीरे धीरे शक्ति वृद्धि की जा सकती है। लेकिन अफसोस की बात है कि इस विधानको या तो लोग नहीं जानते हैं या इसकी परवाह नहीं करते।

जो भाग्यवान पुरुष वर्ण चिकित्सा का प्रयोग करते हैं वह विश्व के कार्य-कारण नियम के बहुत निकट पहुँच जाते हैं और सचमुच उन्हीं को यथार्थ वैज्ञानिक कहना चाहिये।

बहुत कठिन और भयकारक अवस्था में भी व्याधिग्रस्त कोषों और तन्तुओं को बहुत कुछ स्वस्थ कर दिया जा सकता है, यदि यह बात अच्छी तरह जान और समझ ली जाय कि रोग का मूल कारण बीजाणु, कीटाणु या अदृश्य संक्रामक विष नहीं है, परन्तु उनकी उत्पत्ति विश्वकिरणों की अपूर्णता से हुई है। यदि रोग के मूल कारण का पता लग जाय तो उसे दूर करना सरल कार्य है। अगर कोषों को निर्माण करनेवाली विश्वकिरणें कमजोर हो जायें तो उनकी शक्ति बढ़ाई जा सकती है, परन्तु केवल उन्हीं औषधियों से जिनमें यह शक्ति बढ़ाने की सामर्थ्य है, और किसी प्रक्रिया से नहीं। किरणों से ही रोग पैदा होते हैं और किरणें ही रोगों को आराम करती हैं।

रत्न चिकित्सा का उद्देश्य यथार्थ में इसी कार्य का साधन करना है। रत्न भिन्न-भिन्न विश्वकिरणों के भण्डार हैं और सावधानी से उनके प्रयोग द्वारा शरीर के विश्वकिरणों की पुष्टि होती है और रोग का प्रकोप समाप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए स्नायु-प्रदाह (Neuritis) स्नायु रोग है। यह बहुत ही भयानक और कष्टदायक है। रत्न चिकित्सा के अनुसार इस रोग का कारण बैंगनी रंग की न्यूनता है जिससे कि स्नायुयों की पुष्टि होती है। नीलम बैंगनी रंग का आधार है। सुरासार में यह बड़ी शीघ्रता से अपनी किरणें छोड़ता है और यदि इस सुरासार का होमियोपेथी के नियमानुसार प्रयोग किया जाय तो बैंगनी रंग स्नायु-मंडल में पहुँच जायगा और स्नायुयों की उत्तेजना चली जायगी तथा प्रदाह मिट जायगा। यदि बैंगनी रंग का लालटेन से कष्टदायक स्थान पर निक्षेप किया जाय जैसा वर्ण-चिकित्सा में किया जाता है, तो दर्द बहुत शीघ्र दूर हो जाता है। दूर-चिकित्सा में रोगी के फोटोपर बैंगनी प्रकाश डालने का भी

यही फल होता है और दो चार घण्टों में ही इसका प्रभाव दिखाई देता है।

स्नायु के सम्बन्ध में विचार करते हुए यह कहना उचित होगा कि हमारा जन्म इन्द्रधनुष में हुआ है, और इसी इन्द्रधनुष में हम रहते हैं, वृद्धि प्राप्त होते हैं, और इसीमें हमारा जीवनावसान होता है। इन्द्रधनुष हमारा जन्म, जीवन और मृत्यु है। हमारा जन्म एक अति उच्च श्रेणी की स्नायु-क्रियाशीलता है जो कि इन्द्रधनुष के बैंगनी रंग में पाई जाती है। मृतावस्था में हम निर्जीव हो जाते हैं और हमारी क्रियाशीलता का कोई लक्षण दिखाई नहीं पड़ता है, और यही इन्द्रधनुष में अन्तिम अवस्था का द्योतक लाल रंग है। हमारे जन्म के समय हमारा तरंगान्तर (Wave Length) सबसे छोटा होता है (बैंगनी)। ज्यों-ज्यों हम बड़े होते जाते हैं यह तरंगान्तर भी बढ़ता जाता है। अन्त में हम प्रशान्ति और मृत्यु के द्योतक लाल रंग पर पहुँच जाते हैं जिसका तरंगान्तर सबसे लम्बा है। और यह तो स्वतः सिद्ध ही है क्योंकि इन्द्रधनुष का बैंगनी तरंगान्तर सबसे छोटा होता है इसीलिये इसमें सबसे अधिक चंचलता और कर्मशीलता पाई जाती है, परन्तु इन्द्रधनुष के लाल रंगका तरंगान्तर सबसे लम्बा होता है और इसमें सबसे कम द्रुतता और गतिमत्ता पाई जाती है।

अतः जीवन बैंगनी रंग है और लाल रङ्ग मृत्यु है। इनके बीच के जो रङ्ग इन्द्रधनुष में पाये जाते हैं वह हमारे पार्थिव जीवनकाल में हमारे ऊपर अपनी क्रिया दिखलाते हैं। यह बात बिलकुल स्पष्ट है। इन्द्रधनुष सर्वदा हमको पृथिवी की सृष्टि के समय से ही इसी बात की याद दिलाता आ रहा है। इसके सिवाय इन्द्रधनुष हमको ज्ञान, विद्या और आशा देता है। बाइबल के जेनेसिस (Genesis) अध्याय में इसी बात की महान प्रतिश्रुति दी गई है। "मैं अपने धनुष को बादल पर रखूँगा और यह ही मेरे साथ पृथिवी के समझौते का प्रतीक

होगा।" बाइबल की इस उक्ति पर सन्देह करने का कोई भी कारण नहीं है। यह पवित्र ग्रन्थ पूर्णतया विज्ञानपर प्रतिष्ठित है।

अब देखा जाय कि रत्नों के साथ पाँच मूल तत्व अर्थात् पृथिवी, वायु, तेज, जल और आकाश और उनकी पाँच सूक्ष्म प्रकृति—घ्राण, स्पर्श, दृष्टि, स्वाद और शब्द का कैसे संबन्ध जोड़ा जाय। ये पाँच मूल तत्व और उनकी पाँच प्रकृतियाँ पृथिवी के अन्य सब द्रव्यों की तरह इन्द्रधनुष के सात रंगों के घनीभूत रूप हैं। इन सात रङ्गों के बाहर जाना हम लोगों के लिये असम्भव है।

विश्वहरित पृथिवी तत्व और इसकी प्रकृति घ्राण का प्रतिनिधित्व करता है। नारंगी विश्वकिरण जलतत्व और इसकी प्रकृति स्वाद का प्रतिनिधि है। बेंगनी विश्वकिरण वायुतत्व और उसकी प्रकृति स्पर्श का मूल है। नील विश्वकिरण आकाशतत्व और इसकी प्रकृति शब्द का मूल है। लाल विश्वकिरण अग्नितत्व और इसकी प्रकृति दृष्टिका मूल है। पीली किरणें अग्नितत्व की सहायक हैं और नीली किरणें जलका गौणतत्व जो मनुष्य के शरीर में गाढ़ा लसिका रस और शुक्रके रूपमें है, उसका प्रतिनिधित्व करती हैं।

समग्र रत्न विश्वरङ्ग के साथ संबन्धित हैं और उनकी चर्चा मूलतत्व और उनकी सूक्ष्म प्रकृतियों के सम्पर्क में ही करनी चाहिये। चुन्नी लाल है और यही अग्नितत्व का रङ्ग है जिसकी प्रकृति दृष्टि है। मोती नारङ्गी रङ्ग का है जोकि पृथिवीतत्व का रंग है और उसकी प्रकृति स्वाद है। प्रवाल पीला है और यह भी अग्नितत्व का रंग है जिसकी प्रकृति उष्णता है; यही उष्णता मनुष्य शरीर में उत्तापसमता के रूपमें रहती है। पन्ना हरे रंग का है जोकि पृथिवीतत्व का रंग है और जिसकी प्रकृति घ्राण है। चन्द्रमणि या श्वेत-पुखराज आसमानी रङ्ग का है जोकि आकाशतत्व का रङ्ग है और जिसकी

प्रकृति शब्द है। हीरा नीले रंग का है, यह अप्रधानतत्व जल का रंग है जिसकी प्रकृति शीतलता है। इस शीतलता को हम गाढ़े लसिका रस और शुक्र में पाते हैं। नीलम बैंगनी रङ्ग का है जोकि वायुतत्व और उसकी प्रकृति स्पर्श का रङ्ग है। रङ्गों की क्षुधा इन्द्रियों में क्षीणता उत्पन्न करती है और उनको पुनर्जीवित करने के लिये विशेष विशेष रङ्गों के कम्पन की आवश्यकता होती है।

अध्याय ४

वैद्यक शास्त्र में रत्नों का व्यवहार

मनुष्य के कल्याण के लिये रत्नो के आश्चर्य गुणों का औषधि रुपमें व्यवहार भारतवर्ष के अतिरिक्त और किसी भी देश में हुआ है कि नहीं यह कहना बहुत कठिन है। इसलिये आयुर्वेद के प्रेमी किस प्रक्रिया से भिन्न भिन्न रत्नों का व्याधियों की औषधि या प्रतिषेधक रूपमें प्रयोग करते थे इसका संक्षिप्त विवरण देना आवश्यक है।

आयुर्वेद में प्रधान प्रधान रत्नों का औषधियों में प्रयोग भस्म के रूप में ही होता है। भस्म के सिवाय रत्नों को औषधि के रूपमें प्रयोग करने का और कोई अच्छा रास्ता आयुर्वेद में नहीं है और सैकड़ों वर्षों से वैद्य लोग कीमती रत्नों को जलाकर भस्म बनाते आये हैं। सभी अच्छे रत्न इस काम में प्रयुक्त होते थे। इनमें हीरा, पन्ना, मोती, चुन्नी, प्रवाल, श्वेत-पुखराज, नीलम आदि शामिल हैं। जिन जटिल और परिश्रमसाध्य प्रक्रियाओं से वैद्य लोग रत्नों को भस्म करते हैं उनका विवरण देने का स्थान यह नहीं है लेकिन वे किन किन रोगों में इन भस्मों का व्यवहार करते हैं यह जानना हमारे लिये अति आवश्यक है। भिन्न-भिन्न रत्नों के भस्म बाजार में बिकते हैं और इस विषय में जिनको उत्साह हो वे इन्हें खरीद सकते हैं।

आयुर्वेद के अनुसार रोगों पर भिन्न भिन्न भस्मों की क्रिया और शक्ति का विवरण क्रम से दिया जाता है।

१—चुन्नी भस्म।

आयुर्वेद के अनुसार चुन्नी भस्म दीर्घायुप्रद है; तीन जीवनरक्षक तत्व यथा वात, पित्त और कफ को शान्त करता है और क्षयरोग, दर्द, उदरशूल,

फोड़ा, घाव, विषक्रिया, चक्षुरोग और कोष्ठवद्धता को आराम करता है। चुन्नी भस्म शरीर के अंग प्रत्यंग के जलन को भी दूर करता है।

२—मुक्ता भस्म।

आयुर्वेद के अनुसार मुक्ता भस्म ठंडा, मीठा, आँखों का उपकारक, शक्तिदाता, विशेषतः औरतों के शरीर के सौन्दर्य की वृद्धि करने वाला और आयु को बढ़ानेवाला है। मुक्ता भस्म नीचे लिखे हुए रोगों को आराम करता है। क्षयरोग, कृषता, पुराना ज्वर, सब तरह की खाँसी, श्वासकष्ट, दिल धड़कना, रक्त का चाप, हृद्रोग, अजीर्ण और अंगों की जलन।

३—प्रवाल भस्म।

आयुर्वेद के अनुसार प्रवाल भस्म कफ और पित्तजनित रोगों को दूर करता है, और सौन्दर्यवर्धक है और इन रोगों को आराम करता है—यथा कृषता, वालास्थिविकृति, कुष्ठ, खाँसी, अग्निमांद्य, अजीर्ण, कोष्ठवद्धता, ज्वर, विषक्रिया, उन्माद, पाण्डु, कामला, मूत्र घटित रोग, चक्षु रोग, दमा, मेदवृद्धि। नियमित मुक्ता भस्म का सेवन शरीर की शक्ति बढ़ाता है।

४—पन्ना भस्म।

आयुर्वेद के अनुसार पन्ना भस्म ठंडा, मीठा और मेदवर्धक है। यह क्षुधावर्धक है, और अम्लपित्त और जलन को दूर करता है। पन्ना भस्म कई रोगों को भी आराम करता है, यथा तीव्र और मृदु ज्वर, मिचली और वमन, विषक्रिया, दमा, अजीर्ण, बवासीर, पाण्डु और हर प्रकार का घाव और सूजन।

५—श्वेत-पुखराज भस्म।

आयुर्वेद के अनुसार चन्द्रमणि भस्म विष और विषाक्त बीजाणु की क्रिया को नष्ट करता है, मिचली और वमन को रोकता है, वायु और कफ के रोगों को

आराम करता है। अग्निमांद्य, अजीर्ण, कुष्ठ और बवासीर में भी यह हितकारक औषधि है। नियमपूर्वक दीर्घकाल तक इस भस्म के सेवन से मनुष्य बुद्धिमान और मेधावी होता है।

६—हीरक भस्म।

हीरक भस्म आयुर्वेद में बहुत से रोगों में प्रयुक्त होता है। हीरक भस्म निम्न बीमारियों को आराम करता है यथा कुष्ठ, क्षयरोग, कृषता, भ्रान्ति, जलोदर, मेदवृद्धि, मधुमेह, भगन्दर, रक्ताल्पता और सूजन। हीरक भस्म आयु की वृद्धि करता है, शरीर में शक्ति देता है, तन्तुओं को पुष्ट करता है, चेहरे के सौन्दर्य को बढ़ाता है और शरीर को सुख और आराम देता है।

७—नीलम भस्म।

नीलम भस्म बहुधा विरूप शनि से उत्पन्न रोगों में व्यवहार किया जाता है। इनमें ये रोग शामिल हैं—यथा संधिवात, गठिया, उदरशूल, स्नायविक दर्द, भ्रान्ति, मृगी, भूतावेश, गुल्मवायु, बेहोशी, तन्द्रा, मानसिक विकार, जड़बुद्धि और असंयत आचरण।

वैद्यकशास्त्र में ये भस्म अलग अलग प्रयोग किये जाते हैं यद्यपि इनका मिश्रण भी व्यवहार कर सकते हैं। लेकिन आयुर्वेद शास्त्र में प्रतिवर्ष रोगनाशक गुणों को निकालने के लिये बहुत कीमती रत्न नष्ट कर दिये जाते हैं। जब रत्न चिकित्सा प्रचलित हो जाएगी तब रत्नों को नष्ट करने की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी।

रत्नों के संबन्ध में आयुर्वेद शास्त्र की चर्चा करते हुए त्रिदोष का थोड़ासा उल्लेख करना उचित होगा और त्रिदोष और उसके तीन धातु—वात, पित्त और कफ (जिससे पाठक पहिले ही परिचित हैं) में रत्नों का स्थान निर्देश करना आवश्यक होगा।

त्रिदोष की विधियाँ विश्व विधियाँ हैं और उनका परिवर्तन नहीं होता है। रत्न चिकित्सा भी विश्व विधियों पर आधारित है। अतः रत्न का त्रिदोष धातुओं के साथ संबन्ध को दिखलाना भी आवश्यक है।

त्रिदोष का संबन्ध अन्ततः तीन विश्व शक्तियाँ यथा धनात्मक, ऋणात्मक और उदासीन से है। इन विश्वशक्तियों की सहायता से वाह्य और अन्तर्जगत् के तथा ब्रह्मांड और सूक्ष्म जगत् के समग्र उपादान, दृश्य और अदृश्य वस्तुओं की सृष्टि, स्थिति और नाशके लिये सदा एकत्रित होते हैं, अलग होते हैं और फिर मिलते हैं और भिन्न भिन्न प्रकारसे अपने आपको व्यवस्थापित और पुनः समायोजित करते हैं।

यही शक्तियाँ रत्नों में विद्यमान हैं और इस तथ्य पर पूरा ध्यान रखना आवश्यक है, ताकि मनुष्य के दुःख कष्ट को दूर करने के लिये रत्नों का विचक्षणता और उपकारिता के साथ प्रयोग किया जा सके। धनात्मक शक्तियों का नाम कफ है जो कि संघति संपादन करता है; ऋणात्मक शक्ति का नाम पित्त है, जिसका कार्य वियोजन है; उदासीन शक्ति का नाम वायु है जोकि पित्त के साथ, कफ के साथ अथवा दोनों के साथ सुगमता से मिल जाता है और इसके द्वारा ही रोग की शक्ति उत्पन्न, पुष्ट और नष्ट होती है।

जिन सात रत्नों से इन्द्रधनुष के सात रङ्ग उत्पन्न होते हैं उनमें भी यही त्रिदोष और त्रिदोष के गुण पाये जाते हैं। उदाहरणतः चुन्नी लाल विश्वरङ्ग विकिरण करता है। यह उष्ण शक्ति या पित्त है जो कि ऋणात्मक गुण युक्त है और जिसकी शक्ति वियोजनात्मक है। मोती का नारङ्गी विश्वरङ्ग है और इससे कफ उत्पन्न होता है जिसका गुण धनात्मक है और जिसमें संयोजन की शक्ति है। प्रवाल भी चुन्नी के समान ही पित्त है और इसका गुण ऋणात्मक है और इसमें वियोजन करने की शक्ति है।

पन्ना हरे रङ्ग की विश्वकिरण प्रसारित करता है जोकि धनात्मक है और

संयोजन की शक्ति रखता है। श्वेत-पुखराज आसमानी विश्वरङ्ग छोड़ता है जिसका गुण उदासीन है और इसमें संयोजन अथवा वियोजन कोई भी शक्ति नहीं है। हीरे से नीला रङ्ग निकलता है जो कि आयुर्वेदीय कफ की शक्ति रखता है और जिसमें धनात्मक और संयोजन का गुण है। अन्तिम रत्न नीलम से बेंगनी रङ्ग का निःसारण होता है जो कि इन्द्रधनुष के आसमानी रङ्ग के समान गुण रखता है और जिसमें संयोजन या विश्लेषण कोई भी शक्ति नहीं है। आयुर्वेद के अनुसार बेंगनी वायु की शक्ति रखता है।

वायु, पित्त और कफ ये तीन दोष समन्वय, तेज और जड़ता इन तीन विश्व-शक्तियों से सम्पर्कित हैं। ये तीन शक्तियाँ मनुष्य शरीर के प्रत्येक कोषाणु में और बहिर्जगत् के प्रत्येक परमाणु में वर्तमान हैं।

इस आलोचना का तालिकाबद्ध रूप नीचे दिया जाता है।

रत्न	त्रिदोष	विश्वशक्ति	रङ्ग
चुन्नी	पित्त	ऋणात्मक	लाल
मोती	कफ	धनात्मक	नारङ्गी
प्रवाल	पित्त	ऋणात्मक	पीला
पन्ना	कफ	धनात्मक	हरा
श्वेत-पुखराज	वायु	उदासीन	आसमानी
हीरा	कफ	धनात्मक	नीला
नीलम	वायु	उदासीन	बेंगनी

आयुर्वेदिक ग्रन्थों में लिखा है कि 'पित्त और कफ दोनों लंगड़े हैं और उनमें अपने आप चलने की शक्ति नहीं है, लेकिन जब उनमें वायु की शक्ति लग जाती है तब वे बादल की तरह बरसते हैं।' इसलिये रोग के संबन्ध में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है, तथा वायु का विचार ही चिकित्सक का प्रथम और प्रधान कर्तव्य होना चाहिये। इसी के कारण औषधि के मिश्र (mixture)

में किरणों के मिश्रण की आवश्यकता होती है। एक मिश्र में यदि दो ठण्डी या संयोजक शक्तियाँ हों तो उस मिश्र को कार्यकरी बनाने के लिये एक या दो उदासीन शक्ति उसमें मिलाना अत्यन्त आवश्यक है।

अन्त में सात 'भिवजियोर' किरणों को निकालनेवाले रत्नों के स्वादका निश्चय करना ही शेष रह गया है। आयुर्वेद के अनुसार छः ही स्वाद हैं जिनके निर्दिष्ट गुण हैं और जिनका प्रभाव तीनों दोषों पर पड़ता है। जिन सब वस्तुओं का औषधि रूपमें प्रयोग होता है उनमें ये स्वाद पाये जाते हैं। भिन्न भिन्न औषधियों के स्वाद का पता लगाना बहुत ही आवश्यक है नहीं तो उनका सुष्ठु और सठीक प्रयोग करना संभव नहीं है। आयुर्वेद में कुल छः प्रकार के स्वाद हैं और रत्नोंका भेषज रूपमें व्यवहार होने के कारण उनके स्वाद का पता लगाना आवश्यक है। छः स्वाद ये हैं—मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त और कषाय। ज्योतिष ग्रन्थों में भिन्न भिन्न ग्रहों के भिन्न भिन्न स्वाद बताये गये हैं। ग्रहों का स्वाद ही ग्रहरत्नों का स्वाद है। ज्योतिषग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि चुन्नी कटु है, मोती कषाय है, प्रवाल तिक्त है, श्वेत-पुखराज मधुर है, हीरा अम्ल है, नीलम लवण है और पन्ना में सब स्वाद पाये जाते हैं।

स्वाद के संबन्ध में आयुर्वेद में तीन विधियाँ हैं :—

मधुर, अम्ल और लवण वायुको शान्त करता है।

मधुर, तिक्त और कषाय पित्त को शान्त करता है।

कटु, तिक्त और कषाय कफ को शान्त करता है।

अतः इस आयुर्वेदीय स्वादविधि के अनुसार चुन्नी कटु होने के कारण कफको शान्त करता है, मोती कषाय होनेके कारण पित्त और कफ दोनों को शान्त करता है, प्रवाल भी तिक्त होने के कारण पित्त और कफ दोनों को शान्त करता है। पन्ने में छःहों स्वाद एकत्र वर्तमान हैं, इसलिये यह तीनों धातुओं (वायु, पित्त और कफ) को शान्त करता है। श्वेत-पुखराज मधुर है इसलिये

वायु और पित्तको शान्त करता है। हीरा अम्ल होने के कारण और नीलम लवण होने के कारण वायु को शान्त करता है।

संक्षेपतः अपने अपने स्वाद के कारण रत्नों में वात, पित्त और कफको दमन करने वाले गुण आ जाते हैं। रत्नों में स्वादोंका आरोप अभी परीक्षा-मूलक है। इनकी सत्यता निर्णय करने के लिये विशेष परीक्षण की आवश्यकता है।

अध्याय ५

रत्न चिकित्सा और उससे सम्बन्धित विज्ञान

१—ज्योतिषशास्त्र।

भारतवर्ष और अन्य देशों के ज्योतिषशास्त्र में रत्नों को बहुत महत्त्व दिया जाता है। लोगों का यह विश्वास है कि रत्नों से जड़ी हुई अँगूठी पहननेसे दुर्भाग्य और विपत्ति का निवारण हो सकता है और नष्ट स्वास्थ्य पुनः प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये क्रूर ग्रहों को पहिचानने का और रत्नों से उनके प्रभाव को रोकने का निर्देश ज्योतिषशास्त्र में दिया गया है। इसके कई नियम हैं। बराह-मिहिर के 'अष्टकवर्ग प्रक्रिया' के अनुसार ग्रहोंकी कल्याणकारी और अकल्याण-कारी प्रकृति गणित की एक प्रणाली से मालूम हो जाती है। इस विषय की विस्तृत चर्चा का यह स्थान नहीं है, परन्तु ज्योतिषशास्त्र के अनुसार ग्रहों का रत्नोंके साथ सम्बन्ध का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है।

यदि जन्मपत्रिका में रवि क्रूर हो तो चुन्नी उसके अशुभ प्रभाव को नष्ट करती है। अगर चन्द्र अशुभ हो तो वैदूर्य धारण करना चाहिये, यद्यपि चन्द्रका नारङ्गी रङ्ग मोती से निकलता है। अगर मंगल क्रूर हो तो प्रवाल धारण करना उचित है। अगर बुध क्रूर हो तो श्वेत-पुखराज पहनना चाहिये यद्यपि पन्ने से इस ग्रह का हरा रङ्ग निकलता है। अगर गुरु अशुभ हो तो मोती धारण करना चाहिये यद्यपि इस ग्रह का आसमानी रङ्ग चन्द्रमणि से निकलता है। अगर शुक्र अशुभ हो तो हीरा धारण करना चाहिये। हीरा और शुक्र दोनों इन्द्रधनुष का नीला रङ्ग विसर्जन करते हैं। अगर शनि क्रूर हो तो नीलम व्यवहार करना चाहिये। शनि और नीलम दोनों इन्द्रधनुष के बैंगनी रङ्ग का विकिरण करते हैं।

भारतवर्ष के ज्योतिषग्रन्थों में चन्द्र के दो पातस्थानों का नाम राहु (आरोही) और केतु (अवरोही) रखा गया है। क्रूर राहु के लिये गोमेद और क्रूर केतु के लिये पन्ना का विधान है, यद्यपि केतु का रत्न वैदूर्य है। रश्मिचित्र के प्रत्यक्ष रङ्गों के अतीत अदृश्य किरणों का निरूपण राहु और केतु करते हैं।

ज्योतिषशास्त्र का एक पुराना वचन यह है कि समग्र गतिशील और स्थिर (स्थावर और जंगम) सृष्टि सातों ग्रहों में अंगीभूत हैं। सात ग्रहों के रूप में इन्द्र-धनुष के सात विश्वरङ्ग संसार की सब वस्तुओं में विद्यमान हैं और त्रिकोण कांच द्वारा इसका प्रमाण मिलता है। पृथिवी में ऐसी कोई वस्तु नहीं है जिस पर सात ग्रहों का प्रभाव न पड़ा हो और रत्नों में भी इस नियम का व्यतिक्रम नहीं है। कूर्मपुराण का मत है कि जिन सात विश्वकिरणों से ब्रह्मांड रचा हुआ है उन्हीं के घनीभूत रूपके सिवाय ग्रह और कुछ भी नहीं हैं। जैसे ग्रह सात विश्वकिरणों के घनीभूत रूप हैं वैसे ही रत्नों को भी सात किरणों का घनीभूत रूप समझना चाहिये। विश्वरङ्ग के साथ साहचर्य के कारण सात भिन्न भिन्न रत्नों का संबन्ध सात ग्रहों के साथ सिद्ध है।

रत्नों के जो रङ्ग पहिले लिखे गये हैं उनका रङ्ग खाली आँखों से भी वैसाही दीखना सम्भव नहीं भी हो सकता है, लेकिन अगर त्रिकोण कांच से ध्यान के साथ रत्नों की परीक्षा की जाय तो उनके भीतर का रङ्ग प्रगट हो जायगा। दृष्टांत स्वरूप हीरा कांचकी तरह दिखाई देता है, लेकिन त्रिकोण कांच के द्वारा देखने से ही उसका गाढ़ा नीला रङ्ग प्रगट होता है। इसी तरह त्रिकोण कांच से परीक्षा करने पर श्वेत-पुखराज में आसमानी, प्रवाल में पीला, मोती में नारंगी रङ्ग दिखाई देता है। त्रिकोण कांच से अन्य रंगों में कोई परिवर्तन नहीं दीख पड़ता है!

२—होमियोपेथी।

रत्नचिकित्सा और होमियोपेथी में केवल सुरासार और गोलियों का प्रयोग

छोड़कर और कोई भी मेल नहीं है। रत्न अपनी किरणसत्ता को सुरासार में क्षरण करते हैं और ये किरणें इन्द्रधनुष के रंगीन किरणों से संबन्धित हैं। इसलिये रत्न औषधियों में और अधिक शक्ति संचार अनावश्यक है। रत्न चिकित्सा में शक्ति संचार की समय सापेक्ष और व्ययसाध्य प्रणाली की भी कोई आवश्यकता नहीं है।

शक्तिकृत बॅपटि शया (नीला आसमानी) और शक्ति युक्त सिपिया के सिवाय होमियोपेथी में और किसी औषधि के रंग का निर्णय नहीं किया गया है। आश्चर्य की बात यह है कि रंग की दवा होने के कारण बॅपटिशिया और सिपिया का अनेक प्रकार के रोगों में व्यवहार होता है, क्योंकि यह दोनों वायु, पित्त और कफ के पन्द्रह विभागों में ही प्रयोज्य औषधियाँ हैं।

अगर होमियोपेथी में किसी प्रकार से इन्द्रधनुष के सातों रंग होते और बॅपटिशिया और सिपिया की तरह उनकी शक्ति वृद्धि की जा सकती तो चिकित्सा विज्ञान में होमियोपेथी का बहुत ऊँचा स्थान होता। अब भी समय है, कोई उत्साही औषधि निर्माता 'भिवजियोर' रंग में शक्ति संचार का काम शीघ्र अपने हाथ में ले। इससे होमियोपेथी के चिकित्सक सुगमता से रंग का मिश्रण कर सकेंगे और इस उपाय द्वारा रोग विनाश की शक्ति बढ़ा सकेंगे।

औषधियों में जो विश्वशक्ति है उसी के द्वारा होमियोपेथी में रोग आराम होता है। लेकिन उन औषधियों के रंगों का केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है, परन्तु ठीक ठीक पता लगाना संभव नहीं है। लेकिन रत्नचिकित्सा विश्वकिरणों की शक्ति से रोग आराम करती है। दोनों प्रणालियाँ ही अच्छी हैं और दोनों कार्यकरी भी हैं, फिर भी होमियोपेथी के दवाइयों के रंगों का सुष्पष्ट विश्लेषण करना आवश्यक है। प्रत्येक औषधि के अधिकार में इतने लक्षण भरे जाते हैं कि चिकित्सक बिलकुल घबड़ा जाते हैं और भूल रास्ते पर चलते हैं और इसका परिणाम यह होता है कि प्रायशः इच्छानुसार फल नहीं मिलता है।

३—वर्ण चिकित्सा ।

रत्न चिकित्सा, रंग चिकित्सा या वर्ण चिकित्सा का स्वजातीय है; क्योंकि दोनों प्रणालियों में पीड़ित और रुग्न मनुष्यों को आराम करने के लिये विश्वरंगों के अन्तर्निहित शक्ति का प्रयोग किया जाता है। वर्ण चिकित्सा में सूर्य या बिजली के प्रकाश से रंग के शक्तियों की उत्पत्ति होती है। जब कि रत्नचिकित्सा में रंग की शक्ति का मूल स्रोत सात प्रधान रत्न हैं।

यह मान लेना चाहिये कि इन्द्र धनुष के विश्व रंगों के समान सूर्य, बिजली के प्रकाश या रत्न से निकले हुए रंगों में भी तीन दैवी गुण यथा सर्वज्ञता, सर्व-सामर्थ्य और सर्वव्यापिता पाये जाते हैं। रंग अपनी सर्वज्ञता के कारण रोग को पहचान लेते हैं; अपनी सर्वसामर्थ्य से रोग को आराम करते हैं और अपनी सर्वव्यापिता के कारण सम्पूर्ण शरीर के करोड़ों कोषों और तन्तुओं में फैल जाते हैं। अतः रोगियों के रंगों का निर्धारण करने और उन रंगों को रोग को आराम करने के काम में लगा देने के अतिरिक्त चिकित्सक का और कोई काम ही नहीं रह जाता।

वर्ण चिकित्सा और रत्नचिकित्सा के अन्तर्गत जो रंग चिकित्सा है वह स्निग्ध, अनुग्र और सुफलप्रद है और उसके व्यवहार से आगे जाकर कोई अनिष्ट की सम्भावना नहीं है। रंग चिकित्सा का व्यवहार जितना ही बढ़ेगा उतना ही रोगियों की चिकित्सा मानवोचित और मनोरंजिनी होगी और जनप्रियता प्राप्त करेगी।

४—दूर-चिकित्सा।

रत्न चिकित्सा कई विषयों में आधुनिक आविष्कृत दूर-चिकित्सा या विश्व-किरण-चिकित्सा से मिलती जुलती है। दूर-चिकित्सा के विषय में 'The Science of Cosmic Ray Therapy' नामक एक पुस्तक लिखी गयी है। यह पुस्तक Messrs. Good Companions Booksellers and Publishers, Baroda द्वारा प्रकाशित हुई है।

दूर-चिकित्सा में बिजली की मोटर से रत्न-जटित चक्रिका को घुमाकर विश्वरंगों को उत्पन्न किया जाता है। रत्नों से निकले हुए रंग सामने रखे हुए चित्र पर पड़ते हैं और बेतार के द्वारा सूर्य किरण की गति वेग से चित्र के मालिक के पास पहुँच जाते हैं। रत्न चिकित्सा में रत्न के रंग सुरासार में या सुरासार से भीगी हुई गोलियों में छोड़े जाते हैं। फिर इन गोलियों का होमियोपेथिक दवाइयों की तरह सेवन किया जाता है।

दूर-चिकित्सा में विश्वरंग गति-शील हैं लेकिन रत्नचिकित्सा में स्थितिशील हैं। परन्तु दोनों ही प्रणालियों में अन्तस्थित विश्वरंग को छोड़ने के लिये रत्नों का व्यवहार होता है। दोनों बहुत सुफलप्रद हैं क्योंकि दोनों प्रणालियों में विश्वकिरणों का उपयोग होता है, जिनमें सर्वज्ञता, सर्वशक्तिमत्ता और सर्व-व्यापिता ये तीनों गुण विद्यमान हैं। इन गुणों की सहायता से ये किरणें, चाहे वे सुरासार के अन्दर रत्नों से छोड़ी जाँय या बेतार से भेजी जाँय, रोगियों को आराम करती हैं; और मनुष्य शरीर के निर्जीव कोषों और तन्तुओं को पुष्ट और सुसम्बद्ध करके कोमलता से, धीरे धीरे, और दक्षतापूर्वक पूरी तरह रोगों को दूर करती हैं। रत्नचिकित्सा में यह चिकित्सा-प्रक्रिया प्रत्यक्ष दिखाई देती है और दूर-चिकित्सा में यह दृष्टिगोचर नहीं होती है।

रत्नचिकित्सा में रोगी को चिकित्सक के पास आना पड़ता है लेकिन दूर-चिकित्सा में रोगी का नाम या उसके चित्र की ही आवश्यकता होती है। रत्न-चिकित्सा में छोटी छोटी गोलियों का सेवन करना पड़ता है, लेकिन दूर-चिकित्सा में उसकी भी आवश्यकता नहीं है। दूर-चिकित्सा की एक और श्रेष्ठता यह है कि रोग का समाचार पाते ही इसका प्रयोग किया जा सकता है, चाहे रोगी निकट हो या सुदूर अमेरिका में। यों तो यह सब असम्भव मालूम होता है लेकिन समालोचकों से हमारी बिनती यह है :

'पहिले सुनिये उसके बाद दोष दिखलाइये !'

अध्याय ६

रोग और विश्वकिरण

स्वस्थता की कमी को ही रोग कहते हैं। लेकिन यह स्वस्थता की कमी का कारण क्या है ? स्थूल शरीरवाले सब प्राणियों का ही क्या इसके साथ नित्य संबन्ध है ? अथवा क्या यह हमेशा के लिये किन्हीं व्यक्तियों के मन्दभाग्य और चिकित्सक के सौभाग्य की सूचना है ?

इस प्रश्न पर गंभीरता और निपुणता के साथ विचार करना चाहिये। पहिले ही कहा गया है कि पृथ्वी के सब प्रत्यक्ष वस्तुओं का मूल, इन्द्रधनुष के सात रंग हैं। इन किरणों को घनीभूत करने से ही प्रत्यक्ष या दृश्यमान वस्तु की उत्पत्ति होती है। नील आकाश पर अकस्मात् एक छोटे से बादल के टुकड़े ने आकार धारण किया—अर्थात् शून्यता या अवस्तु से प्रत्यक्ष वस्तु की सृष्टि हुई। अगर कोई त्रिकोण काँच से इस बादल की परीक्षा करने का कष्ट उठाये तो उसे तत्क्षण ज्ञात होगा कि बादल का रंग प्रायशः नारंगी, अर्थात् जल का रंग है। अतः बादल के समान अन्य कोई प्रत्यक्ष वस्तु नारंगी रंग की संघति के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं है। इसी प्रकार प्रकृति में अन्यान्य वस्तुओं की उत्पत्ति हुई है।

रोग और रोगी सात विश्व रंग के घनीभूत रूप का नामान्तर ही हैं। हमारे जीवन में इन किरणों की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। इन किरणों में ही हमने जन्म लिया है, इनमें ही हम रहते हैं और पुष्ट होते हैं और इनमें ही हमारी मृत्यु होती है। इसलिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हम इन किरणों से ही रोगों को पाते हैं। हमारे शरीर के सब कोष इन सात किरणों से बने हुए हैं। इन कोषों का स्वास्थ्य इन किरणों की समता और प्रचुरता के ऊपर निर्भर करता

है। जिन अन्तरस्थ किरणों से मनुष्य शरीर के कोष, तन्तु और भिन्न भिन्न संस्थानों की पुष्टि होती है, उन पर सदा परिवर्तनशील प्राकृतिक परिवेश के कारण बाहर के किरणों का निरन्तर प्रभाव पड़ता रहता है; इसलिये किरणों का अभाव उत्पन्न होता है।

अगर कोष अपुष्ट हों और वे आवश्यक रंगों का प्रकम्पन न पाते हों तो उनमें रंग की भूख पैदा होती है। जब यह रंग की क्षुधा बहुत बढ़ जाती है तब रोग पैदा हो जाता है। दृष्टांतस्वरूप—स्नायुमंडली अपना खाद्य और पुष्टि विश्व-बैंगनी रंग से पाती है। अगर इस रंग की कमी हो जाये तो स्नायुओं में बैंगनी रंग की भूख पैदा होती है। इसका फल होता है—स्नायु शूल, स्नायु प्रदाह और स्नायु पीड़ा अथवा मूर्छा और भिन्न भिन्न प्रकार का आक्षेप। बैंगनी रंग की क्षुधा के ये निश्चित लक्षण हैं। इस समय यही चाहिये कि बहुतायत से बैंगनी रंग की पूर्ति की जाय।

यह पूर्ति कई तरह से हो सकती है। निक्षेपक यन्त्र द्वारा एक स्लाइड के भीतर से बैंगनी किरण पीड़ित अंग पर फेंकने से इस बैंगनी रंग की पूर्ति होगी और दर्द जाता रहेगा। घर में तेज बैंगनी रंग की बिजली की बत्ती जलाने से भी रोगी को फायदा पहुँचेगा। बैंगनी रंग की बोतल को सूर्य किरणों के मध्य स्थापित करके उसके भीतर की हवा को सूंघने से बैंगनी रंग की पूर्ति होगी। सूर्य स्नात बैंगनी प्रभावित जल, दुग्ध-शर्करा, गोलियाँ, लवण और खाद्य भी बैंगनी रंग की पूर्ति करते हैं।

कुछ नीलमों से जड़ी हुई चक्रिका को जोर से घुमाने से दूर-चिकित्सा के अनुसार बैंगनी किरणें उत्पन्न होती हैं। जब इन किरणों से रोगी या उसके चित्र को भर दिया जाता है तब उसको बहुतायत से बैंगनी किरणें मिल जाती हैं। नीलम को सुरासार में सात दिन रखने से यह सुरासार नीलम से बैंगनी रंग खींच लेता है और इस सुरासार में गोलियाँ भिगो देने से उनमें भी बैंगनी किरणों की

शक्ति आ जाती है। इस बैंगनी रंग से भरी हुई गोलियाँ अगर रोगी को पुनः पुनः दी जाँय तो उसके क्षुधित स्नायुयों को बैंगनी रंग का खाद्य मिल जायगा। इस प्रकार से स्नायुओं की भूख मिट जायगी और रोगी आराम हो जायगा। इसको समझना कोई कठिन बात नहीं है। स्नायु पीड़ा को आराम करने में बैंगनी रंग की शक्ति का प्रमाण परीक्षणात्मक प्रदर्शन द्वारा प्रति दिन मिल रहा है।

अब यह देखना है कि मनुष्य शरीर क्या है और यह किस प्रकार निर्मित होता है। इसको अच्छी तरह समझने के लिये हमको आयुर्वेद की शरण लेनी पड़ेगी। यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि सब तरह के भैषज्य सम्बन्धी तथ्य का आयुर्वेद आज भी भंडार समझा जाता है। तीन हजार वर्ष का पुराना यह शास्त्र आज भी सर्व प्रकार के भैषज्य गवेषणा की प्रेरणा का मूल स्रोत बना हुआ है। आयुर्वेद शास्त्र अभी तक चिकित्सा विद्या और चिकित्सा तत्व का दिग्दर्शन कराता आ रहा है। हजारों वर्ष तक आयुर्वेद ने बहुत विपत्तियों का सामना किया लेकिन आज भी यह जीवित है और जब तक मनुष्य का अस्तित्व रहेगा तब तक यह शास्त्र भी जीवित रहेगा।

आयुर्वेद के अनुसार मनुष्य शरीर में सात विभिन्न संस्थान हैं और उनके सात भिन्न भिन्न कार्य हैं। इन सात संस्थानों का नाम क्रमशः रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र हैं। यह सातों संस्थान गत्यात्मक हैं और ये सर्वदा बाहर के खाद्य को शरीर गठनकारी मूल्यवान उपादान में रूपान्तरित करते रहते हैं।

जब विविध प्रकार के आकार, गुण और स्वाद का खाद्य लिया जाता है तो यह वायु की सहायता से मुख से पाकस्थली में चला जाता है। स्वाभाविक नियम से शरीर के भिन्न भिन्न स्थानों से निकले हुए रसों के द्वारा इस खाद्य के

सूक्ष्म छिन्नांश हो जाते हैं और यह गरम होकर, गलकर एक पतला मण्ड बन जाता है। पहिले इस मण्ड का स्वाद मीठा होता है लेकिन आगे जाकर जब यह और अधिक पच जाता है तब तरल हो जाता है और उसका स्वाद नमकीन हो जाता है। धीरे-धीरे इसके दो भाग हो जाते हैं, (१) रस और (२) फालतू पदार्थ। इस फालतू या अनावश्यक पदार्थ का जलीय भाग वायु के द्वारा वृक्क और मूत्राधार में चला जाता है और फिर शरीर के बाहर निकल जाता है। इसी तरह से वायु स्थूल पदार्थ को छोटे अन्त्र में और फिर बड़े अन्त्र में ले जाता है और वहाँ यह ठहर जाता है और अपानवायु की सहायता से मल के रूप में निकल जाता है।

तरल रूप में जो द्रव्य रहता है उसे रस (chyle) कहते हैं। यह शरीर के सम्पूर्ण रस संस्थान को पुष्ट करता है और इसका सूक्ष्म अंश पाँच दिन और रात के बाद रक्त में परिणत हो जाता है। रक्त का सारांश पाँच दिन और रात के बाद मांस बन जाता है। मांस का सारांश मेद में रूपान्तरित होता है। इससे सब मेद संस्थान और ग्रन्थियों की पुष्टि होती है। पाँच दिन और रात के बाद यह मेद अस्थि बन जाता है जो कि अस्थि संस्थान को पुष्ट करता है। अस्थि का सूक्ष्म अंश मज्जा बन जाता है जिससे समग्र मज्जा संस्थान की पुष्टि होती है। अन्त में मज्जा का सारांश शुक्र में रूपान्तरित होता है। प्रथम दिन का लिया हुआ खाद्य ५ × ६ = ३० दिन में शुक्र बन जाता है। संक्षेप में मनुष्य शरीर के गठन का और इन सात विभिन्न वस्तु जन्य सात संस्थानों का यही विवरण है।

आयुर्वेद में मज्जा और स्नायु में कोई भेद नहीं है, परन्तु ज्योतिषशास्त्र के अनुसार इन दोनों संस्थानों में बहुत भिन्नता है। ज्योतिष की पुस्तकों के अनुसार स्नायु का अधिपति शनि है जो वायु की शक्ति रखता है। लेकिन मज्जा के ऊपर मंगल का आधिपत्य हैं जिसमें पित्त या ऋणात्मक शक्ति है। व्यवहारिक

क्षेत्र में ज्योतिष का मत ही अधिकतर समीचीन विदित हुआ है। ज्योतिष शास्त्र की पुस्तकों में रस और रक्त संस्थान में कोई भेद नहीं माना गया है। ज्योतिष के अनुसार इन दोनों के ऊपर चन्द्र का अधिकार है जिसमें धनात्मक शक्ति है और जिसकी प्रकृति ठंडी है।

भिन्न भिन्न रंगों की विश्वकिरणों का भी शरीर के संस्थानों पर भिन्न भिन्न प्रभाव पड़ता है। यथा रस और रक्त नारंगी रंग के अधिकार में हैं। मांस संस्थान हरे रंग की विश्वकिरण के अधिकार में है। आसमानी रंग का अधिकार मेद संस्थान और ग्रन्थियों पर है। लाल किरणें अस्थि संस्थान को पुष्ट करती हैं। मज्जा पीले रंग के अधिकार में है और स्नायु संस्थान का अधिपति बैंगनी रंग है। अन्तिम शुक्र संस्थान नीली किरणों के द्वारा प्रभावित होता है। इन किरणों के अधिकार-व्यवस्था से इस बात का पता लग जायगा कि मनुष्य शरीर के सात भिन्न भिन्न संस्थानों के रोगों में किन किन रत्नों का व्यवहार किया जाय और संकटावस्था में कौनसी किरणें दी जाँय।

जब पुराने रोग से शरीर पीड़ित होता है तो पहिले ही स्नायु संस्थान बिगड़ जाता है। उसके बाद मोटे लसिका रस और शुक्र पर असर होता है। फिर मेद संस्थान और ग्रन्थियाँ विकल हो जाती हैं। फिर मांस संस्थान की बारी आती है। मांस के बाद मज्जा उसके बाद रक्त और अन्त में अस्थि संस्थान बिगड़ जाता है। अतः रोगों के आक्रमण का क्रम बिलकुल इन्द्रधनुष के सात रंगों के क्रमानुसार ही है।

जब बैंगनी रंग की कमी हो जाती है तो स्नायुओं पर बुरा प्रभाव पड़ता है। नीले रंग की कमी से शुक्र बिगड़ जाता है, आसमानी की कमी से ग्रन्थियाँ, हरे रंग की कमी से मांस पर प्रभाव पड़ता है और पीले की कमी से मज्जा पर। नारंगी रंग की कमी से रक्त पर बुरा असर होता है और अन्त में लाल रंग की कमी से अस्थियों में पीड़ा होती है। लेकिन इससे यह सिद्धान्त नहीं निकालना चाहिये

कि प्रकृति से ये रंग हमें नहीं मिल रहे हैं। बात तो यह है कि रंग हमको प्रचुरता से मिल रहे हैं लेकिन अपने स्वास्थ्य की उन्नति के लिये हमारे भीतर उनके ग्रहण और परिपाचन करने की शक्ति नहीं है। प्रकृति में सब वस्तुओं के समान ये सात संस्थान सातों विश्वकिरणों से बने हुए हैं लेकिन प्रत्येक में एक एक रंग प्रधान है।

अध्याय ७

रत्न औषधियाँ और उन्हें तैयार करने की विधि

पिछले अध्यायों से यह बात स्पष्ट हो गई होगी कि रोगों का प्रधान कारण विश्वरंग की भूख है। इस भूख को मिटाना ही रत्न चिकित्सा का प्रधान काम है। जब रत्न इस रंग की कमी को पूरा करते हैं तो सातों मनुष्य संस्थान, कोष और तन्तुओं की पर्याप्त पुष्टि हो जाती है और यह अपना स्वास्थ्य पुनः प्राप्त कर लेते हैं। रत्न विश्वरंग के अक्षय भंडार हैं। इस रंगको औषधि में रूपान्तरित करने की आवश्यकता है जिससे उसका प्रयोग सुगम, फलप्रद और सार्वजनीन हो। इसलिये इस अध्याय में रत्न औषधि और उनके मिश्रण बनाने की प्रणाली का वर्णन दिया जायगा।

रत्नों से औषधि तैयार करना बहुत ही सरल कार्य है। इस प्रणाली का वर्णन करने के पहिले कुछ आवश्यक वस्तुएँ इकट्ठी करनी चाहिये जिनसे इस पुस्तक में वर्णित रत्नचिकित्सा के अनुसार औषधियाँ बनाई जाँय।

रत्न औषधियाँ और उनके मिश्रण बनाने के लिये आवश्यक वस्तुओं की सूची नीचे दी जाती है। (१) सात कीमती रत्न, (जिनका वजन एक या आधी रत्ती हो) यथा चुन्नी, मोती, प्रवाल, श्वेत-पुखराज या स्फटिक, हीरा या कम मूल्य का कमल-हीरा, नीलम और पन्ना। (२) कुछ एक आउन्स की शीशियाँ जिन्हें गरम पानी से साफ कर लिया गया हो और सुरासार में धो लिया गया हो और जिनमें नये कार्क (डाट) लगा दिये गये हों। (३) लगभग चार आउन्स विशुद्ध सुरासार या शोधित मद्यसार (Absolute Alcohol or Rectified Spirit)। (४) एक पाउण्ड अच्छी दुग्धशर्करा से बनी हुई २० नं० की गोलियाँ।

इन उपादानों को लेकर हम रत्नौषधि बनाने का काम हाथ में ले सकते हैं। पहिले सुरासार से साफ़ की हुई एक शीशी लीजिये; फिर एक चुन्नी को सुरासार से धो डालिये; शीशी में एक ड्राम सुरासार भर दीजिये और चुन्नी को उसके अन्दर डाल दीजिये। शीशी को अच्छी तरह से कार्क से बन्द करके एक अन्धेरे घर में (जहाँ सफेद रोशनी नहीं जा सके) या एक सन्दूक में सात दिन और सात रात रख दीजिये। इस निर्दिष्ट समय के बाद शीशी को बाहर निकालकर थोड़ी देर तक हिलाइये और एक आउन्स २० नं० की गोलियाँ उसके अन्दर डालिये। थोड़ी देर तक धीरे धीरे शीशी को ऊपर नीचे घुमाने से तमाम गोलियाँ इस तेजयुक्त सुरासार में भीग जाँयगीं। कुछ घण्टों के बाद गोलियों को एक सफेद कागज पर सुखा लीजिये और चुन्नी को शीशी से निकाल लीजिये और सुरासार से धोकर भविष्य में व्यवहार के लिये सावधानी से रख दीजिये। अब कागज से गोलियों को उठाकर शीशी के अन्दर भर दीजिये और उसके ऊपर 'चुन्नी या माणिक्य गोलियाँ' लिख दीजिये, या रंग पहचानने के लिये लाल टिकट लगा दीजिये। दवा तैयार हो गई।

इसी तरह और एक शीशी लीजिये और उसके अन्दर एक ड्राम सुरासार भर दीजिये। इस सुरासार में एक मोती डाल दीजिये और उसे सात दिन और सात रात उसी में रहने दीजिये। इस समय के बाद शीशी को अन्धेरे बक्स से निकाल लीजिये और २० नं० गोलियों को इस तेजयुक्त सुरासार में डाल दीजिये। फिर गोलियों को सुखा लीजिये और मोती को निकालकर भविष्य में व्यवहार के लिये रख दीजिये। शीशी पर 'मोती गोलियाँ' लिख दीजिये, या रंग पहिचानने के लिये नारंगी टिकट लगा दीजिये। गोलियाँ व्यवहार के लिये तैयार हो गईं।

तीसरी शीशी में थोड़ा सा सुरासार लीजिये और उसमें एक प्रवाल डाल दीजिये और सात दिन और सात रात एक अन्धेरे घर में रख दीजिये। इस

समय के बाद गोलियों को शीशी में भर दीजिये और अच्छी तरह से उन में दवा लगने दीजिये। उसके बाद गोलियों को सुखाकर प्रवाल को धोकर भविष्य में व्यवहार के लिये रख दीजिये। फिर उस पर 'प्रवाल गोलियाँ' लिख दीजिये, या रंग पहिचानने के लिये पीला टिकट लगा दीजिये। गोलियाँ काम के लिये तैयार हो गईं।

इसी तरह से एक चौथी शीशी में एक पन्ने को सुरासार के अन्दर सात दिन और सात रात एक अन्धेरे घर में रख दीजिये। इस समय के बाद शीशी में एक आउन्स २० नं० की गोलियाँ डालकर उसमें अच्छी तरह से दवा लगने दीजिये। उसके बाद पन्ने को निकाल लीजिये और शीशी पर 'पन्ना गोलियाँ' लिख दीजिये, या रंग पहिचानने के लिये हरा टिकट लगा दीजिये।

इसी तरह से पाँचवीं शीशी में एक श्वेत-पुखराज या स्फटिक सुरासार में डाल दीजिये और सफेद रोशनी से बचाकर एक बन्द घर में सात दिन और सात रात रख दीजिये। इस समय के बाद गोलियों को तेजयुक्त सुरासार में अच्छी तरह से भीगने दीजिये। रत्न को निकालकर शीशी पर 'श्वेत-पुखराज गोलियाँ' लिख दीजिये या रंग पहिचानने के लिये आसमानी रंग का टिकट लगा दीजिये।

इसी प्रकार से एक छठी शीशी में एक ड्राम सुरासार के अन्दर आधा रत्ती हीरा या कुछ कमल-हीरे डालकर शीशी को एक अन्धेरी जगह में सात दिन और सात रात रख दीजिये। इस समय के बाद २० नं० की गोलियाँ इस तेजयुक्त सुरासार में भिगो दीजिये। और शीशी पर 'हीरे की गोलियाँ' लिख दीजिये, या रंग पहिचानने के लिये गहरा नीला टिकट लगा दीजिये।

अन्त में सातवीं शीशी में सुरासार के अन्दर एक नीलम सात दिन और सात रात रख दीजिये। और इसके बाद २० नं० की गोलियाँ उस तेजयुक्त सुरासार में भिगो दीजिये। सूखने के बाद नीलम को हटा लीजिये और शीशी पर 'नीलमणि की गोलियाँ' लिख दीजिये, या पहिचानने के लिये बैंगनी रंग की

चिप्पी लगा दीजिये। इस औषधि को बैंगनी रंग की कमी से जो रोग पैदा होते हैं, उनमें व्यवहार करना चाहिये।

इन्द्रधनुष के सात किरणों (VIBGYOR) की ये सात रत्न औषधियाँ हैं। मामूली तौर पर रत्न के दवाखाने में इन औषधियों के अतिरिक्त और कुछ आवश्यक नहीं है। लेकिन उन रोगों में जिनमें एकाधिक रंग की कमी है, रंग मिश्रण या रत्न मिश्रण का प्रयोग आवश्यक हो जाता है।

रत्न मिश्रण में नीचे लिखी हुई औषधियाँ प्रधान हैं।

१—भि. आइ. वि. जि. गोलियाँ

(रत्न : नीलम, हीरा, श्वेत-पुखराज और पन्ना)

अलग अलग रत्नौषधि बनाने की जो रीति है वही रत्नमिश्रण में भी काम आती है। पहिले एक शीशी में एक ड्राम सुरासार ले लीजिये। उसमें चार रत्न नीलम, हीरा, श्वेत-पुखराज और पन्ना डालकर एक अन्धेरे घर में सात दिन और सात रात रख दीजिये। उसके बाद शीशी को अच्छी तरह से हिलाकर उसके अन्दर एक आउन्स २० नं० की गोलियाँ डाल दीजिये और उसको अच्छी तरह से इस तेजयुक्त सुरासार में भिगो दीजिये। कुछ घण्टों के बाद एक सफेद कागज के ऊपर गोलियों को सुखा लीजिये और रत्नों को निकालकर, धोकर भविष्य में व्यवहार के लिये रख दीजिये। गोलियों के विश्वरंग पहिचानने के लिये शीशी पर 'VIBG गोलियाँ' का टिकट लगा दीजिये। अगले अध्याय में जिन रोगों की सूची दी गई है प्रायशः उन सब रोगों में इस औषधि का प्रयोग हो सकता है। प्रबल या अनतिप्रबल रोगों में 'भि. आइ. बि. जि. गोलियों' की आवश्यकता होती है।

२—सप्तरश्मि गोलियाँ

(रत्नः नीलम, हीरा, श्वेत-पुखराज, पन्ना, प्रबाल, मोती और चुन्नी)

इस मिश्रण के तैयार करने की प्रणाली पहिले जैसी ही है। शीशी में

नीलम, हीरा, श्वेत-पुखराज, पन्ना, प्रबाल, मोती और चुन्नी को सात दिन और सात रात सुरासार के अन्दर रख दीजिये। इस समय के बाद सुरासार सात रत्नों की किरणों से तेजयुक्त बन जायगा। गोलियों को सुरासार में भिगोकर सुखा लीजिये और सुखाने के समय रत्नों को अलग कर दीजिये। अब शीशी पर 'VIBGYOR गोलियाँ' की चिप्पी लगा दीजिये। बहुत पुराने और संकट-जनक रोगों में यह दवा काम आती है।

इस तरह आवश्यकतानुसार विश्वरंगों को मिलाया जा सकता है। भिन्न-भिन्न रोगों के लिये रत्न मिश्रण भी बढ़ाये जा सकते हैं। ऐसा एक मिश्रण 'आइ. बि. जि. ओ. गोलियाँ' भिन्न भिन्न प्रकार के पुराने और तीव्र ज्वर में आश्चर्यजनक फल देता है। इस मिश्रण में हीरा, पन्ना, श्वेत-पुखराज और मोती, ये चार रत्न हैं जिनका विश्वरंग नीला, हरा, आसमानी और नारंगी है। यह लक्ष्य करने की बात है कि नीला, हरा और नारंगी ये तीनों ही ठंडे रंग हैं और आसमानी उदासीन है जिससे कि ठंडे रंगों में वायु तत्व की सहायता मिलती है। 'IBGO गोलियों' से दो से चौबीस घण्टों के मध्य ज्वर उतर जाता है।

रत्न औषधियों में (मिश्र या अमिश्र) २० नं० की चार गोलियाँ प्राप्तवयस्क मनुष्य के लिये एक मात्रा समझी जाती है। दस वर्ष से कम बच्चों के लिये दो गोलियों की मात्रा होती है। एक वर्ष से कम बच्चों के लिये एक गोली की मात्रा होती है। एक रत्न से तैयार की हुई औषधि रोग के प्रकार भेद के अनुसार दिन में छः बार तक दे सकते हैं। 'भि. आइ. बि. जि.' मिश्रण को दिन में तीन बार से अधिक नहीं देना चाहिये। पुराने रोगों में दिन में एक बार देने से बहुत अच्छा फल मिलता है। सप्तरश्मि (भि. आइ. बि. जि. वाइ. ओ. आर.) गोलियाँ दिन में एक मात्रा से अधिक नहीं देना चाहिये। इसको एक दिन के अन्तर पर देने से फल और भी अच्छा मिलता है। क्या मात्रा दी जाय और कितने बार दी जाय यह तो चिकित्सक की बुद्धि और रोग की तीव्रता के ऊपर

निर्भर करता है, लेकिन ऊपर जो कुछ बताया गया है वह सुविवेचना और बुद्धिमानी का मध्यम-मार्ग है।

अन्त में इस बात पर फिर ध्यान देना चाहिये कि अमिश्र दवाइयाँ तीव्र रोगों के लिये हैं और 'VIBG गोलियाँ' प्रबल या अनतिप्रबल रोगों के लिये हैं। बहुत पुराने और प्राणघाती रोगों में जहाँ रंगों की क्षुधा अन्तिम सीमा तक पहुँच गई है 'VIBGYOR गोलियों' का व्यवहार करना चाहिये। अगर तीव्र रोगों में अमिश्र रंगों से कोई फल नहीं मिलता हो तो 'VIBG गोलियों' का प्रयोग करना उचित है।

यहाँ और एक बात पर कुछ विवेचना करना उचित समझता हूँ। ऐसा सुना जा रहा है कि देश में मद्यनिषेध कानून के विभिन्न स्थानों में लागू हो जाने के कारण 'एलकोहॅल' या सुरासार दुर्लभ हो गया है। अतः रत्नों की औषधियाँ तैयार करने में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उपस्थित हो गई हैं।

ऐसी शिकायतें भारतवर्ष के सभी राज्यों के रत्नचिकित्सा प्रेमियों की ओर से हमारे पास आ रही हैं। इसीलिये एक विकल्प प्रयोग का आभास इस स्थान में देने का प्रयत्न करता हूँ। प्रायः एक वर्ष से इस नये प्रयोग द्वारा जो फल मुझे प्राप्त हुआ है, उसी के आधार पर इस नये प्रयोग के विषय में लिखता हूँ। पाठकगण से इसकी परीक्षा करके देखने का विशेष अनुरोध है।

एक स्वच्छ खाली शीशी के आधे भाग तक ३० नम्बर की शक्कर की गोलियाँ पहिले भर देना चाहिये। उपरान्त जिस रत्न अथवा रत्न मिश्रण की औषधि बनाने की इच्छा हो, वही रत्न अथवा रत्न समष्टि शीशी के अन्दर भर देना चाहिये, जिससे कि रत्न गोलियों के संस्पर्श में आ जाँय। बारबार शीशी हिलाते रहिये। इस प्रकार एक सप्ताह में औषधि तैयार हो जायगी। टिकट पूर्ववत् लगाइये।

अध्याय ८

रोग और उनकी रत्न औषधि विधियाँ

सुगमता के साथ रत्नचिकित्सा करने के लिये साधारण रोगों की और उनके रत्न औषधियों की सूची नीचे दी जाती है। यह सूची बहुत सावधानी से तैयार की गई है और आशा है कि अनुभवी चिकित्सक के संशय और द्विधा की अवस्था में यह तालिका विशेष मार्ग दर्शक होगी।

संकेताक्षरों का विवरण

भि०—भायोलेट या बैंगनी

आइ०—इंडिगो या नीला

ब्रि०—ब्लू या आसमानी

जि०—ग्रीन या हरा

वाइ०—यलो या पीला

ओ० - ऑरेञ्ज या नारङ्गी

आर०—रेड या लाल

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
ऐमिबिक रक्तातिसार (Amæbic Dysentery)	हीरा	भि. आइ. ब्रि. जि.
पाण्डु (Anæmia)	चुन्नी	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
मुखक्षत (Aphthæ)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
सन्यास (Apoplexy)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
सन्धिवात (Arthritis)	चुन्नी	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
दमा (Asthma)	पन्ना	भि. आइ. ब्रि. जि.
बॅसिलरि रक्तातिसार (Bacillary Dysentery)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
गंज (Baldness)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
पित्त ज्वर (Billious fever)	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
पित्त प्रकोप (Billiousness)	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
मूत्राशय की कमजोरी (Bladder weakness)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
रक्तस्राव (Bleeding)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
अंधापन (Blindness)	हीरा	भि. आइ. ब्रि. जि.
अंधी बवासीर (Blind Piles)	प्रवाल	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
रक्तचाप (Blood Pressure)	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
फोड़े (Boils)	पन्ना	भि. आइ. ब्रि. जि.
मस्तिष्क ज्वर (Brain Fever)	मोती	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
मस्तिष्क प्रदाह (Brain Inflammation)	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
मूत्र में अण्डलाला निस्सरण (Bright's Disease)	हीरा	भि. आइ. ब्रि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
स्वरघ्न (Bronchial Croup)	हीरा	भि. आइ. वि. जि.
वायुनलियों का प्रदाह (Bronchitis)	हीरा	भि. आइ. वि. जि.
कुचले घाव (Bruises)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
गाँठयुक्त प्लेग (Bubonic Plague)	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
जल जाना (Burns)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
कर्कट रोग (Cancer)	मोती	आइ. वि. जि. ओ.
स्तन का कर्कट रोग	मोती	आइ. वि. जि. ओ.
मोतियाबिन्द (Cataract)	हीरा	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
मस्तिष्क की झिल्ली का प्रदाह	नीलम	भि. आइ. वि. जि.
मोतिया चेचक या लघु मसूरिका (Chicken Pox)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
हरित्पाण्डु (chlorosis)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
हैजा (Cholera)	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
रक्तप्रवाह की असम्पूर्णता	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
सर्दी	पन्ना	भि. आइ. वि. जि.
उदरशूल	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जी.
विकम्पन (Concussion)	नीलम	भि. आइ. वि. जि.
कोष्ठबद्ध, कब्ज	प्रवाल	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
क्षयरोग	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
आक्षेप (Convulsions)	हीरा	भि. आइ. वि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
खाँसी	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
अंगाक्षेप (Cramp)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
रेंगता हुआ पक्षाघात	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
क्रूप खाँसी	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
कट जाना (Cuts)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
रूसी (Dandruff)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
बहिरापन	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाई. ओ. आर.
दुर्बलता (Debility)	चुन्नी	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
सन्यस्त प्रलाप (Delirium Tremens)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
भ्रम (Delusions)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
मन की अवसन्नता (Depression)	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
मधुमेह (Diabetes)	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
उदरामय (Diarrhœa)	श्वेत-पुखराज	आइ. व्रि. जि. ओ.
पाकस्थली की बीमारियाँ	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
पानी का स्राव	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
जलोदर (Dropsy)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
पेचिश या रक्तातिसार (Dysentery)	श्वेत-पुखराज	आइ. व्रि. जि. ओ.
कष्टदायक ऋतु या कष्टरज	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
मन्दाग्नि (Dyspepsia)	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
कान की बीमारियाँ	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
खुजली	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
मृगी (Epilepsy)	नीलम	आइ. व्रि. जि. ओ.
दानेदार ज्वर (Eruptive Fever	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
विसर्प (Erysipelas)	पन्ना	भि. आइ. व्रि. जि.
आँख की बीमारियाँ	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
मुख का पक्षाघात	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
स्त्रियों की बीमारियाँ	श्वेत पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
ज्वर	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
भगन्दर (Fistula)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
कोष्ठवायु या अफारा	प्रवाल	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
पित्तपथरी	मोती	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
पाकस्थली का घाव	प्रवाल	भि. आइ. बि. जि. वाइ. ओ. आर.
घेघा या गलगंड (Goitre)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
गठिया (Gout)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
दानेदार पलक (Granular Lids)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
मसूड़े की सूजन (Gum boil)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
भ्रम-दृष्टि (Hallucinations)	हीरा	भि. आइ. बि. जि. वाइ. ओ. आर.
नजलेज़ुकाम का बुखार	श्वेत-पुखराज़	आइ. वि. जि. ओ.
सिर दर्द	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
कलेजे की जलन	प्रवाल	भि. आइ. बि. जि. वाइ. ओ. आर.
हृदय की बीमारी	पन्ना	भि. आइ. बि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
अन्त्र वृद्धि (Hernia)	चुन्नी	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
स्वर भंग (Hoarseness)	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
जलातङ्क (Hydrophobia)	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
अम्लाधिक्य	पन्ना	मि. आइ. वि. जि.
व्याधि शंका (Hypochondria)	हीरा	मि. आइ. वि. जि.
गुल्म वायु (Hysteria)	हीरा	मि. आइ. वि. जि.
अजीर्ण	प्रवाल	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
बच्चों का आक्षेप	हीरा	मि. आइ. वि. जि.
बच्चों का पक्षाघात	चुन्नी	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
सूजी हुई आँतें	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि ओ.
मस्तिष्क प्रदाह	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
चक्षु प्रदाह	हीरा	आइ. वि. जि. ओ.
मूत्रग्रन्थि का प्रदाह	मोती	मि. आइ. बी. जी. वाई. ओ. आर.
इन्फ्लूएंजा	पन्ना	मि. आइ. वि. जि.
उन्माद	हीरा	मि. आइ. वि. जि वाइ. ओ. आर.
अनिद्रा	हीरा	आइ. वि. जि. ओ.
सविराम ज्वर	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
उपप्रदाह (Irritation)	नीलम	मि. आइ. वि. जि.
खुजली (Itches)	श्वेत पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
कामला (Jaundice)	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
वृक्क (Kidneys)	नीलम	मि. आइ. वि. जि.
कण्ठ-नली प्रदाह	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
अवसाद (Lassitude)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
कुष्ठ	प्रवाल	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
धवल	नीलम	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
श्वेतप्रदर	हीरा	भि. आइ. वि. जि.
लिउकीमिया (Leukemia)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
यकृत की बीमारियाँ	प्रवाल	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
घ्राण शक्ति का ह्रास	पन्ना	भि. आइ. वि. जि.
स्वर शक्ति का ह्रास	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
पागलपन	नीलम	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
फेफड़े की बीमारियाँ	हीरा	भि. आइ. वि. जि.
मलेरिया ज्वर	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
उन्माद	हीरा	भि. आइ. वि. जि.
छोटी माता (Measles)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
खिन्नता (Melancholia)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
मस्तिष्क-झिल्ली-प्रदाह	नीलम	भि. आइ. वि. जि.
ऋतु	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. वि. जि.
मानसिक दुर्बलता	मोती	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
अधकपाली का दर्द (Migraine)	नीलम	भि. आइ. वि. जि.
तिल (Moles)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
बुद्धिहीनता (Moronic)	चुन्नी	भि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
श्लैष्मिक ज्वर (Mucous Fever)	हीरा	आइ. वि. जि. ओ.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
कर्णमूल प्रदाह	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
मिचली (Nausea)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
स्नायविक व्याधियाँ	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
स्नायविक अवसाद	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
स्नायुशूल	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
स्नायविक सिरदर्द (Neuralgic Headache)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
स्नयु प्रदाह (Neuritis)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
स्नायु रोग (Neurosis)	नीलम	भि. आइ. व्रि. जि.
रतौंधी	चुन्नी	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
नकसीर (Nose Bleeding)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
नाक की बीमारियाँ	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि.
मेदवृद्धि	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
आवेश (Obsession)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
मुख का विगलन (Oral Sepsis)	मोती	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
दिल धड़कना	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. व्रि. जि.
पक्षाघात (Palsy)	हीरा	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
लकवा (Paralysis)	चुन्नी	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
कफप्रधान ज्वर	हीरा	आइ. व्रि. जि. ओ.
क्षयरोग	मोती	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
अर्श या बवासीर	प्रवाल	भि. आइ. व्रि. जि. वाइ. ओ. आर.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
प्लेग	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
फुस-फुस प्रदाह	हीरा	भि. आइ. ब्रि. जि.
सुषुम्नाप्रदाह (Poliomyelitis)	चुन्नी	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
किसी अंग का भ्रंश (Prolapsus)	मोती	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
उदरामय	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
सामान्य गलक्षत (Quinsy)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
संधिवात (Rheumatism)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
खोपड़ी की बीमारियाँ	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
सुर्ख बुखार (Scarlet Fever)	श्वेत-पुखराज	आइ. ब्रि. जि. ओ.
कटिशूल (Sciatica)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
शीताद (Scurvy)	नीलम	भि. आइ. ब्रि. जि.
प्रबल उपघात या विक्षोभ (Shock)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
चर्म-रोग	प्रवाल	भि. आइ. ब्रि. जि. वाइ. ओ. आर.
चेचक या बृहत् मसूरिका (Small Pox)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
गलक्षत (Sore throat)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
आक्षेप (Spasms)	श्वेत-पुखराज	भि. आइ. ब्रि. जि.
मेरुमज्जा प्रदाह (Spinal Meningitis)	नीलम	आइ. ब्रि. जि. ओ.

रोग का नाम	रत्न की गोलियाँ	मिश्रण
मुखक्षत (Sprue)	हीरा	मि. आइ. वि. जि.
डंक	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
पेट की गड़बड़	प्रवाल	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
उपदंश (Syphillis)	पन्ना	मि. आइ. वि. जि.
कशेरुका मज्जा का क्षय (Tabes Dorsalis)	नीलम	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
दाँत निकलना	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
धनुस्तम्भ (Tetanus)	नीलम	मि. आइ. वि. जि.
प्यास	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
दंतशूल	हीरा	मि. आइ. वि. जि.
यक्ष्मा (Tuberculosis)	मोती	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
रसौली (Tumour)	नीलम	मि. आइ. वि. जि.
सान्निपातिक ज्वर (Typhoid Fever)	श्वेत-पुखराज	आइ. वि. जि. ओ.
घाव (Ulcers)	पन्ना	मि. आइ. वि. जि.
शीतपित्त (Urticaria)	पन्ना	आइ. वि. जि. ओ.
सिर चकराना (Vertigo)	पन्ना	मि. आइ. वि. जि.
उलटी (Vomiting)	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.
बलगम के साथ खाँसी (Wet-Cough)	मोती	मि. आइ. वि. जि. वाइ. ओ. आर.
कुक्कुर खाँसी (Whooping Cough)	श्वेत-पुखराज	मि. आइ. वि. जि.

अध्याय ६

उपसंहार

इस छोटी सी पुस्तक में वर्णित रत्नचिकित्सा के कई स्पष्ट लाभ हैं। जिनके कारण चिकित्सक और साधारण जनता की भी इस चिकित्सा में रुचि होगी।

(१) पहिले तो यह चिकित्सा प्रणाली बहुत सरल है। कुछ रत्न और दो चार सस्ती चीजों के सिवाय इसमें और किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। अपने काम के लिये साधारण गृहस्थ भी इन दवाइयों को सरलता से बना सकता है।

(२) इस चिकित्सा में विदेशी गोलियां और तरल दवाइयों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है जिनमें प्रायशः कोई लाभ नहीं होता है लेकिन खर्च बहुत पड़ जाता है। अगर मामूली रत्न खरीदे जाँय तो सात रत्नों का दाम भी कुछ ज्यादा नहीं होता है। अगर कुछ खर्च पड़ता भी हो तो जीवनभर में एकही बार पड़ता है। एक बार रत्न को खरीदकर बराबर उससे तेज औषधियाँ बना सकते हैं।

(३) रत्नचिकित्सा में सबसे ऊँचे दर्जे की विश्व-शक्तियाँ काम में लाई जाती हैं जो कि सर्वज्ञ, सर्वशक्तियुक्त और सर्वत्र विद्यमान हैं। यह दवाइयाँ निरापद, स्वाभाविक, सस्ती और कार्यकरी होती हैं और भविष्य में इनसे किसी तरह की हानि नहीं पहुँचती है।

(४) दवाइयाँ मृदु प्रकृति की हैं और इनका सेवन मुँह से किया जाता है। इसमें औषधि का प्रयोग करने के लिये त्वचा पेशी या शिरा को बेधने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। रत्नचिकित्सा में रोगी को किसी तरह की पीड़ा नहीं होती।

(५) इन दवाइयों की संख्या आश्चर्यरूप से कम है लेकिन असंख्य रोगों में इनका प्रयोग हो सकता है। दो चार शीशियों से ही हजारों रोगियों का इलाज हो सकता है। एक मिश्रण द्वारा सैकड़ों रोग आराम हो सकते हैं। जैसे कि VIBG मिश्रण का प्रयोग तमाम स्नायु, मोटा लसिका रस, मेद, ग्रन्थि, और मांस संस्थान के रोगों में हो सकता है। इनके लिये अन्य चिकित्सा-विज्ञानों में सैकड़ों दवाइयों की जरूरत होती है।

(६) महामारी के समय रत्न औषधियाँ बहुत ही उपकारी हैं। बहुत ही शीघ्रता से और बहुत ही कम व्यय द्वारा देशी उपादानों से तैयार की हुई रत्नौषधियाँ सारे देश के कोने-कोने में पहुँचा दी जा सकती हैं।

इस युक्तिसंगत और अभिनव चिकित्सा प्रणाली के कई और भी गुण प्रकट होंगे क्योंकि यह एक दैवी विज्ञान हैं और सब मनुष्यों के ग्रहणयोग्य है। इस प्रणाली की समुचित और यथायोग्य परीक्षा होनी चाहिये।

सब चिकित्सा प्रणालियों में ही खाद्य का एक गुरुत्वपूर्ण स्थान हैं, इसलिये इस छोटी सी पुस्तक को समाप्त करने के पहिले इस विषय में कुछ कथन आवश्यक है। यद्यपि रत्नचिकित्सा कार्यकरी है और इससे कोई हानि भी नहीं पहुँचती है तो भी यह चिकित्सा तभी सफल हो सकती है जब खाद्य के विषय में रोगी और चिकित्सक में पूरा सहयोग हो। उपयुक्त खाद्य ठीक ठीक समय पर खाने से प्रायशः मनुष्य बीमार नहीं पड़ता है। उसी प्रकार कोई मनुष्य जो अनुचित खाद्य खाने पर तुल गया हो वह कभी स्वस्थ नहीं रह सकता है चाहे वह औषधि सेवन करे या न करे।

यह बात बहुत महत्त्वपूर्ण है कि हम पेट को एक ऐसा कबाड़खाना न समझ लें जिसमें हर कोई चीज फेंकी जा सकती है और दिनभर में जितनी बार चाहें डाली जा सकती है। यह आदत स्वास्थ्य के लिये बहुत ही हानिकारक है। इस बात का खयाल रखना चाहिए कि मनुष्य की पाकस्थली इस तरह बनी हुई

है कि चौबीस घण्टे में दो बार पेट भर भोजन से ज्यादा और कुछ हजम करने की शक्ति इसमें नहीं है। अगर हम तीसरी बार इसमें कोई कठिन पदार्थ दें तो हम रोग को लाने के लिये रास्ता तैयार करते हैं। रोग कुछ एक ही दिन में नहीं आयगा लेकिन धीरे-धीरे शरीर की शक्ति घटती जायगी और अन्त में यह कठिन व्याधियों का घर बन जायगा।

आहार में समय का भी एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, जैसे कि सूर्योदय के बाद तीन घण्टे तक कोई कठिन पदार्थ पेट के अन्दर नहीं जाना चाहिए। नौ से बारह बजे तक का समय आहार के लिए प्रशस्त है क्योंकि इस समय का खाया हुआ अन्न पूरा पच जाता है और शरीर को पुष्ट करता है। बारह बजे के बाद खाया हुआ अन्न अवश्य ही वायु पैदा करता है और हजम नहीं होता है। अगर कोई इस आत्मघाती अभ्यास को डाल ले, तो अन्त में वह रक्त भार का शिकार बन जायगा और शायद पचास वर्ष की आयु के पहले ही थ्रमबोसिस रोग (Thrombosis) से उसकी मृत्यु हो जायगी।

दूसरा पूरा भोजन शाम के सात और आठ बजे के मध्य हो जाना चाहिए। दो पूरे भोजनों के बीच में अगर भूख भी लगे तो भी कोई कठिन पदार्थ खाना उचित नहीं है। कठिन वस्तु के बजाय भूख लगने पर फल या फल का रस लेना चाहिए। दो बार आहार करने की आदत पड़ जाने पर किसी मनुष्य को प्रायशः भूख नहीं लगती।

आहार के समय पानी पीना चाहिये और भोजन के बाद चार घण्टे तक पानी नहीं पीना चाहिये। पाचनक्रिया के समय में अगर पानी पीया जाय तो उक्त क्रिया में गड़बड़ हो जाती है और उसका फल होता है बदहजमी और वायु का प्रवेश। आगे चलकर यह वायु औदरिक पेशी (Diaphragm) के ऊपर धक्का देती है और हृदय की क्रिया में बाधा डालती है और हृदय की गति अनियमित यहाँ तक कि सविराम हो जाती है।

खाद्य और पानी के सम्बन्ध में यह दो सहज और सरल लेकिन बहुत ही महत्वपूर्ण स्वास्थ्य के नियम हैं। जो मनुष्य स्वस्थ और सक्रिय जीवन भोग करना चाहता है उसके लिये ये दो नियम अवश्यमेव पालनीय हैं।

ठीक समय भोजन न करने के कारण और सारी उमर खाद्य विषय में समय के नियम का पालन न करने के कारण अतीत काल में लोगों ने कष्ट भोगे हैं और आजकल भी भोग रहे हैं। कर्कट रोग, पाकस्थली और ग्रहणी का घाव, मधुमेह, दमा, थ्रमब्रोसिस आदि प्राणघाती रोगों का प्रत्यक्ष कारण यही खाद्य संबन्धी अनियम है।

समय बहुमूल्य वस्तु है। आयुर्वेद ने समय के त्रिदोष पर बहुत जोर दिया है, यथा सवेरे ६ बजे से १० बजे तक कफ का समय है, जब श्लेष्मिक झिल्लियाँ पूरा काम करती हैं। यह ही शरीर के दूषित और फालतू पदार्थों को निकाल देने का समय है। कफ छः बजे शुरू होता है, आठ बजे सबसे तेज हो जाता है और दस बजे शान्त हो जाता है।

१० बजे से २ बजे तक पित्त का समय है। यह पाचक अग्नि का समय है जब कि पचनक्रिया अधिकाधिक कार्य करती है। जितना बन पड़े पित्त का समय पचनक्रिया के लिये छोड़ देना चाहिये। पित्त का समय दस बजे शुरू होता है, बारह बजे इसका सबसे ज्यादा जोर रहता है और दो बजे यह शान्त हो जाता है। पित्त के चरम सीमा पर पहुँचने के पहिले ही भोजन कर लेना चाहिये।

२ से ६ बजे तक वायु का समय है जब स्नायुमण्डल का काम तेजी से चलता है। इस समय में शरीर के खाली स्थानों और नलियों से तमाम अव-रोधक पदार्थ निकाल दिये जाते हैं। वायु दो बजे शुरू होता है, इसका पूरा जोर चार बजे होता है और ६ बजे यह शान्त हो जाता है। जिस समय में वायु पाकस्थली के प्रत्येक भाग को खाली करने में पूरे तौर से लगा हुआ रहता है,

उस समय कुछ भी खाद्य लेने से वायु बिलकुल विक्षुब्ध हो जाता है। कुपित वायु से तमाम सांघातिक अर्बुद (Tumour) और प्राणघाती विद्रधियों (Malignant Growths) की उत्पत्ति होती है।

वायु की वेगवृद्धि होने से नाड़ी तेज चलती है। (Sapphire Globs) नीलम की गोलियाँ इसकी गति बन्द कर देती हैं। जब पित्त बढ़ जाता है तो VIBG गोलियाँ विकल और उछलती हुई नाड़ी को शान्त करती हैं। जब कफ बढ़ जाता है तब नाड़ी नरम और मृदु हो जाती है। VIBGYOR गोलियाँ इस अवस्था को सुधार देती हैं।

इस बात को फिर एक बार दुहराने की आवश्यकता है कि हम इन्द्रधनुष में जीवन धारण करते हैं, इसी में हम पुष्ट होते हैं, हमारा जन्म और मरण इन्द्रधनुष में ही होता है। हमारा जीवन इन्द्रधनुष के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक दौड़ के सिवाय और कुछ भी नहीं है। जन्म से मृत्यु तक का निर्दिष्ट काल इन्द्रधनुष का दृश्यमान भाग है और मृत्यु से जन्म तक का समय इन्द्रधनुष का अदृश्य भाग है। इन्द्रधनुष हमारे शरीर के अन्दर ही अवस्थित है और सदा हमारे कल्याण के लिये हमारी देखभाल करता रहता है। यह बात भी स्मरण रखनी चाहिये कि इन्द्रधनुष सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वत्र विद्यमान है और इसके सातो रंगों में भी येही गुण पाये जाते हैं।

रत्नचिकित्सा समय का उपहार है। हमारे मित्र श्री हावर्ड डी. स्टॉङ्गल की उक्ति के अनुसार "विश्व आत्मा अपनी आवश्यकता को जानती है और अपनी सम्पत्ति को आप ही ले लेती है।"

॥ ओँ तत्त्वमसि ॥

परिशिष्ट

सप्तरत्नों के विषय में संक्षिप्त टिप्पणियाँ

साधारणतया हिन्दुस्थान के बाजारों में जो रत्न बिकते हैं उनका चार सुस्पष्ट श्रेणियों में विभाजन हो सकता है, यथाः

१ असली रत्न

सबसे ऊँची श्रेणी के रत्नों में सुन्दर रूप से कटाई और चमक दी जाती है। ये स्वच्छ और निर्दोष होते हैं और उनके भीतर और बाहर से चमकदार आभा निकलती है। ये रत्न कई आकार और तौल के होते हैं और आकार, तौल, आभा, चमक, स्वच्छता, प्राप्यता और कई और विषयों के अनुसार उनका मूल्य न्यूनाधिक होता है। प्रायशः ये कीमती रत्न अँगूठी, चूड़ी, हार, बाजू, मुकुट, तगड़ी इत्यादि गहनों में जड़े जाते हैं। उनका व्यवहार ग्रहों के कोप की शान्ति के लिये और बुरी नजर से बचने के लिये तावीज के रूप में भी किया जाता है। रत्नचिकित्सा में इन रत्नों का उपयोग हो सकता है लेकिन कीमत बहुत ज्यादा पड़ जाती है।

२ पालिश किये हुए रत्न

दूसरी श्रेणी के रत्नों को नगीना कहते हैं। ये प्रायशः गोल, अण्डाकृति और भिन्न-भिन्न आकार के होते हैं। इनमें घिसाई और मसृणता (Polish) होती है लेकिन इनमें भिन्न-भिन्न नाप और आकार की कटाई नहीं होती है और इनमें श्रेणी-विभाग नहीं होता है। इन रत्नों में स्वच्छता नहीं होती है लेकिन ये भी असली रत्न हैं और इनमें खूब चमक होती है। ये रत्न आयुर्वेदिक औषधि बेचने वालों के यहाँ मिलते हैं और इनसे ऊँचे दरजे की भस्में तैयार होती हैं। ये रत्न काफी सस्ते होते हैं और रत्नचिकित्सा के उपयोगी हैं।

३ मामूली खुरदुरे (Rough) रत्न

तीसरी श्रेणी के रत्नों को खण्ड रत्न कहते हैं। इनमें स्वच्छता, आभा या चमक नहीं होती है और ये खुरखुरे होते हैं। न तो ये काटे जाते हैं और न इनमें घिसाई होती है। और ये रास्ते के रोड़ों की तरह बेढंगे आकार के होते हैं। वैद्य लोग इनसे निकृष्ट कोटि के भस्म बनाते हैं। ये खण्ड रत्न खानों से निकले हुये कच्चे पत्थर हैं और इनमें घिसाई या कटाई नहीं हो सकती है। ये खारिज द्रव्य हैं और बहुत सस्ते होने पर भी रत्नचिकित्सा के उपयोगी नहीं हैं।

४ नकली रत्न

चौथी श्रेणी में नकली पत्थरों की गिनती है जो कि रासायनिक प्रक्रिया द्वारा काँच से तैयार होते हैं। ये सुड़ौल आकार के होते हैं। इनमें कोई कलङ्क नहीं होता है और इनमें भी आभा, स्वच्छता और चमक पूरी तौर से रहती है। देखने में ये बिलकुल प्रथम श्रेणी के रत्नों की तरह होते हैं। असली और नकली रत्नों का भेद समझने के लिये बहुत ही सावधानी और निपुणता की आवश्यकता है क्योंकि यह बात निःसंशय है कि नकली रत्नों का उपयोग रत्नचिकित्सा में नहीं हो सकता।

इस प्रारम्भिक विचार के बाद सात रत्नों का विवरण नीचे दिया जाता है जिससे उनके रंग, आकार, गुण और तोल के विषय में कुछ साधारण ज्ञान हो जाय। असली और नकली रत्नों के प्रभेद को पहिचानने के लिये कुछ संकेत भी दिये जाते हैं।

१—चुन्नी

चुन्नी को निर्मल, स्वच्छ, लाल रंग का कुरुविन्द (Corundum) कह सकते हैं। रत्नों में सिर्फ हीरे से ही इसका काठिन्य कम है। भारतवर्ष में इसको माणिक्य, चुन्नी और पद्मराग कहते हैं। इसका रङ्ग रक्त कमल के समान गाढ़ा लाल होता है और यह स्निग्ध और चित्ताकर्षक होता है। चुन्नी कई रूप

और आकार की पायी जाती है। छोटे-छोटे आकार और बेडौल आकार के नगीना चुन्नी बाजार में बहुतायत से और बहुत सस्ते मिलते हैं लेकिन जैसे जैसे इसका आकार और उत्कर्ष बढ़ता जाता है, यह रत्न दुष्प्राप्य होता जाता है और इसकी कीमत भी बहुत बढ़ जाती है।

एक रत्ती या कुछ अधिक भार की चुन्नी को यदि दूध में रख दिया जाय तो यह अपना लाल रङ्ग दूध में छोड़ देती है और दूध चुन्नी के रङ्ग की छटा से लाल दीखता है। पुनः यदि चुन्नी को चाँदी या सीप की तश्तरी पर रखा जाय और उसमें धूप लगाई जाय तो आधार गाढ़ा लाल दीखेगा। आधे से एक रत्ती भार की ऐसी चुन्नी रत्नचिकित्सा के लिये उपयोगी है। दो या तीन नगीना चुन्नी के टुकड़ों का वजन आधा रत्ती होता है। उनको सुरासार के अन्दर डालकर चुन्नी की रत्नौषधि बन सकती है।

२—मोती

मोती एक चमकीला रत्न है जो कि कई तरह के कड़े आवरणवाले समुद्री शंख जीवों में पाया जाता है लेकिन अधिकतर यह सीप में ही मिलता है। फारस की खाड़ी बसरा और भूमध्य सागरीय प्रान्त से आया हुआ मोती उत्कर्षता और आभा के लिये प्रसिद्ध है। मोती के कई रंग होते हैं, यथा दूध की तरह सफेद, रक्ताभ, पीताभ और यहाँ तक कि काला मोती भी पाया जाता है। जो मोती दूध की तरह सफेद होता है, वह जलतत्व के अधीन होता है और वही रत्नचिकित्सा के लिये उपयोगी होता है। सुडौल आकार के गोल और अण्डाकृति मोती अगर वजन में भारी हों तो उनकी कीमत बहुत होती है लेकिन दूसरी तरह का मोती भी पाया जाता है जो बेडौल और भद्दी शकल का होता है और बहुत सस्ता मिलता है। यह भी अपनी दमक और त्रिकोण काँच से निकले हुए नारंगी रंग के कारण रत्नचिकित्सा के लिये उपयोगी है।

बाजार में नकली मोती बहुत मिला करते हैं और नकली और असली मोती का प्रभेद पहिचानने के लिये बहुत ही सावधानी से परीक्षा करना आवश्यक है। एक परीक्षा यह है :—सारी रात मोती को गोमूत्र में रखने से अगर यह फट या टूट जाय तो यह नकली है। परन्तु यदि वह वैसा ही रह जाय तो उसे असली मोती समझना चाहिये। मोती को परखने के और भी कई उपाय हैं लेकिन यहाँ उनका वर्णन देना आवश्यक नहीं है।

३—प्रवाल।

समुद्र के तलदेश में उद्भिद प्राणि-कंकालों से कई रंग के बने हुए एक प्रकार के कड़े पदार्थ को प्रवाल कहते हैं। संस्कृत में प्रवाल को विद्रुम कहते हैं और इसका साधारण नाम मूँगा, पला, प्रवाल इत्यादि है। प्रवाल कई रंग का पाया जाता है जैसे गाढ़ा लाल, हलका लाल, सफेद और धूसर। औषधि के लिये हलके लाल रंग का प्रवाल सबसे अधिक उपयोगी है क्योंकि त्रिकोण काँच से जाँच करने से इसी प्रवाल में इन्द्रधनुष का पीला रंग दिखाई देता है।

प्रवाल कुछ निष्प्रभ और अस्वच्छ होता है। यह लकड़ी सा होता है और इसे सुपारी की भाँति तीक्ष्णधार यन्त्र से काट सकते हैं। प्रवाल के दानों का व्यवहार जपमाला में होता है और बच्चों को अशुभ दृष्टि से बचाने के लिये इसका तावीज पहनाया जाता है। प्रवाल बहुत सस्ता मिलता है इसलिये नकली प्रवाल बनाने में कोई लाभ नहीं है। रत्तीभर श्रेष्ठतम प्रवाल से उसकी औषधियाँ हमेशा के लिये तैयार हो सकती हैं।

४—पन्ना

पन्ना एक बहुत कीमती फिरोजा जाति का पदार्थ है। इसका रङ्ग सुन्दर मखमली हरा होता है और फिरोजा से इसके रङ्ग में ही भिन्नता है। संस्कृत में इसका नाम मरकत है और हिन्दुस्तान में साधारणतया इसे पन्ना कहते हैं। इस रत्न का रंग हलका हरा से गाढ़ा हरा तक होता है। अगर इसकी घिसाई अच्छी

तरह से हो और यह मुलायम और स्वच्छ हो और इसमें दाग, चीड़ या धुँआ न हो और ये अच्छे आकार का, चमकदार और प्रभायुक्त हो, तो यह बहुत ही उच्च श्रेणी का रत्न समझा जाता है। उपरान्त यदि इसका वजन अच्छा हो तो यह बहुमूल्य रत्न हो जाता है। वैद्य लोग जो पन्ना नगीना बेचते हैं, वह रत्नचिकित्सा के लिये पूर्णतया उपयोगी है। और एक रत्ती वजन का यह रत्न सदा के लिये संचित रखना चाहिये। ये छोटा सा पत्थर हरे विश्व किरणों का और पन्ना गोलियों का चिरस्थायी आधार बन जायगा।

नकली पन्ना बहुत मिलता है और असली पन्नों से इनका भेद समझ लेना चाहिये। अगर काँच से बना हुआ नकली पन्ना आँख के सामने थोड़ी देर तक रखा जाय तो आँख में गरमी मालूम होगी लेकिन इस तरह असली पन्ने को रखने से आँखों में ठंडक आ जायगी। अगर लकड़ी पर नकली पन्ना घिसा जाय तो इसकी चमक बढ़ जाती है। नकली पन्ना हाथ में रखने से भारी मालूम पड़ता है लेकिन असली पन्ना हलका, मुलायम और चित्ताकर्षक होता है। नकली पन्ना रत्नचिकित्सा में व्यवहार नहीं करना चाहिये।

५—श्वेत-पुखराज

श्वेत-पुखराज स्फतीय (Feldspar) का एक प्रकारभेद है। इसके अन्दर से मोती सी एक चमक निकलती है। संस्कृत में इस पत्थर को पुष्पराग कहते हैं और इसका साधारण नाम पुखराज है। पुखराज, स्फटिक और चन्द्रमणि एक ही जाति के पत्थर हैं। इनमें रङ्गों का बहुत अन्तर होता है, जैसे कि पीला, हलका पीला, काँच की तरह सफेद, दूध की भाँति सफेद और इन सब में बहुत अच्छी स्वच्छता होती है। त्रिकोण काँच से देखने पर इनसे हलका आसमानी रङ्ग निकलता है। खाली आँख से देखने पर पुखराज पानी मिलाये हुए दूध की तरह सफेद दिखाई देता है और भस्म के लिये वैद्य लोग इसका व्यवहार करते हैं। यह पत्थर टेढ़े-मेढ़े, बेडौल आकार के होते हैं और इनका

वजन भी कई तरह का होता है। रत्न चिकित्सा के लिये एक रत्ती ही पर्याप्त है।

सुरासार में रखने से यह पत्थर हीरे के समान चमकीला मालूम होता है। नकली पुखराज बाजार में बहुत पाये जाते हैं और यह धोखाधड़ी से असली के नाम पर बिकते हैं। जब पुखराज बहुत चमकीला, बेदाग और अच्छे सुडौल आकार का दिखाई देता हो तो सम्भव है कि वह नकली है और रत्नचिकित्सा के किसी कामका नहीं। लेकिन जब यह पत्थर ठीक रंग का हो और इसमें कुछ दाग, चीड़ और धुंधलापन हो तो इसे असली पुखराज समझना चाहिएं। इस पत्थर को जाँचने के और भी नियम हैं लेकिन उनका वर्णन आवश्यक नहीं है।

६—हीरा

रत्नों में सबसे कीमती और दुनिया की सब चीजों से कठिन वस्तु हीरा है। संस्कृत में इसे हीरक या वज्रमणि कहते हैं और इसका साधारण नाम हीरा है। कई आकार और प्रकार के हीरे पाये जाते हैं। बड़े आकार के हीरों को पानी में डालकर अगर उनको सूर्यकिरणों के सामने रखा जाय तो उनमें से भिन्न-भिन्न प्रकार के रंग की ज्योति निकलती है। किसी से लाल रंग, किसी से आसमानी, किसी से हरी, किसी से बैंगनी, किसी से दूध या कांच की तरह सफेद आभा निकलती है। इस रंग की आभा के अनुसार ही हीरे का मूल्याङ्कन होता है। हीरा प्रायशः नकली पाया जाता है। असली और नकली हीरा का प्रभेद समझने के लिये तो बहुत ही निपुण और सुदक्ष जौहरी की आवश्यकता होती है। इसके परखने का एक छोटा सा उपाय यह है कि यदि हलके गरम दूध में हीरे को रखा जाय तो वह तुरन्त ही ठंडा हो जाता है।

एक और जाति का हीरा मिलता है जो असली भी है और सस्ता भी। इसको कमल-हीरा (संस्कृत में वैक्रान्त) कहते हैं। हीरा के सब गुण इसमें पाये

ज्ञाते हैं। संस्कृत में एक वाक्य है "वज्राभावे तु वैक्रान्तम्" अर्थात् यदि हीरा नहीं मिले तो वैक्रान्त से काम लिया जाय। वैक्रान्त भस्म वैद्यों के पास मिलती है और वे इस पत्थर को भी बेचते हैं। कमल हीरा प्रायशः छोटा, पतला, स्वच्छ और हीरा की भाँति चमकदार होता है। जहाँ तक ज्ञात हुआ है वैक्रान्त की नकल नहीं हुई है।

७—नीलम

नीलम एक बहुत स्वच्छ और चमकीला कुरुविन्द जाति का रत्न है। जामुनिया मणि (Amethyst) के समान इसका रंग बहुत सुन्दर बैंगनी होता है। संस्कृत में इसको इन्द्रनील कहते हैं और इसका साधारण नाम नीलम या नीला है। इस रत्न के बारे में लोगों में कुसंस्कार फैला हुआ है और इसके कल्याणकारी और अहितकारी गुणों के संबन्ध में बहुत विचित्र कहानियाँ प्रचलित हैं। नीलम का रंग बैंगनी है जो नीले और लाल रंग का मिश्रण है। इसका रंग जामुनिया मणि से कुछ गहरा होता है। त्रिकोण काँच से देखने पर हलके रंग के नीलम से भी इन्द्रधनुष का सुन्दर बैंगनी रंग प्रकाशित होता है। सबसे ऊँचे श्रेणी का और सबसे कीमती नीलम चमकीला होता है, बहुत अच्छा पालिश किया हुआ होता है, बहुत स्वच्छ होता है, आकार में बहुत सुडौल होता है, उसमें कोई दाग, चीड़ या धुंधलापन कहीं नहीं होता; और उससे इन्द्रधनुष का सुन्दर और मनोहर बैंगनी रंग निकलता है। रत्नचिकित्सा के लिये इसका एक रत्ती ही काफी है, लेकिन अगर इसका मूल्य बहुत ज्यादा मालूम हो तो वैद्य लोग जो नीलम नगीना बेचते हैं उससे भी काम चल जाता है क्योंकि यह असली भी है और सस्ता भी। बाजार में इस रत्न के बहुत प्रकार के नकल मिलते हैं इसलिये काँच और असली पत्थर का प्रभेद जानना आवश्यक है। एक परख यह है कि एक रत्ती नीलम दूध के अन्दर यदि कुछ समय तक रखा जाय तो वह

दूध नीले रंग का दीखेगा, इसका कारण यह है कि असली रत्न के रंग की ज्योति दूध में आ जाती है। दूध की बात तो छोड़ दीजिये जल में भी रंग देने की शक्ति काँच में नहीं है।

रत्नचिकित्सा के लिये रत्न खरीदने के समय उनको पहिचानने के लिये पाठक को दो चार साधारण निर्देश ऊपर दिये गये हैं। जो इस कार्य में सुदक्ष और निपुण हैं उनके लिये इन निर्देशों की आवश्यकता नहीं है, और जिन लोगों ने जीवन भर में रत्न का कोई व्यवहार ही नहीं किया है वे इन निर्देशों से कोई लाभ नहीं उठा सकेंगे। लेकिन कुछ ऐसे भी लोग हैं जिनको रत्नों के विषय में थोड़ी बहुत अभिज्ञता है और जो इस विषय में अपना ज्ञान बढ़ाना चाहते हैं, उनको उक्त निर्देशों से कुछ लाभ अवश्य होगा। रत्नों की आजकल की कीमत नहीं दी गई है क्योंकि वह बराबर घटती बढ़ती रहती है और व्यापारी लोग इनको मनमानी कीमत पर बेचते हैं। अनभिज्ञ ग्राहकों के लिये रत्न के बाजार में बहुत धोखा और खतरा है।